ॐ

भक्ति

अनन्याश्चिन्तयन्तो मां ये जनाः पर्युपासते ।
तेषां नित्याभियुक्तानां योगक्षेमं वहाम्यहम् ॥

सर्वधर्मान्परित्यज्य मामेकं शरणं व्रज ।
अहं त्वा सर्वपापेभ्यो मोक्षयिष्यामि मा शुचः ॥

मन्मना भव मद्भक्तो मद्याजी मां नमस्कुरु ।
मामेवैष्यसि युक्त्वैवमात्मानं मत्परायणः ॥

सम्पादकः—कृष्णानन्द

भाद्रपद सम्वत् १९८५ ।

वार्षिक चन्दा १)   एक प्रतिका ।)

भक्ति के नियम।

१. भगवान् की भक्ति का प्रचार करना गो रक्षण और उस के लिए गोचर भूमि छुड़वाना, जलाशय बनवाना, मनुष्य मात्र के लिए शिक्षा का प्रचार करना। वैदिक अनुभूत औषधियों का प्रचार करना, ग्रामों में परस्पर के झगड़े और वैमनस्य मिटा कर शान्ति व प्रेम बढ़ाना। सब संस्थाओं में भगवद्भक्ति और धर्म का भाव जाग्रत करना। राजा और प्रजा सब ही का हित चिन्तन करना।

२. यह पत्र प्रतिमास की पूर्णिमा को प्रकाशित हुआ करेगा।

३. वार्षिक चन्दा सर्वसाधारण से २) होगा

४. जो महानुभाव २५) रुपया देंगे वह पत्र के संरक्षक और ५) देनेवाले सहायक होंगे।

५. अश्लील और अपरिचित विज्ञापन नहीं लिए जावेंगे।

६. लेखों को प्रकाशित करना और और घटाना व बढ़ाना सर्वदा सम्पादक के अधिकार में होगा।

७. लेख सम्बन्धी पत्र व्यवहार सम्पादक के नामसे और विज्ञापन व प्रबन्ध सम्बन्धी पत्र व्यवहार मैनेजर भक्तिके नामसे होना चाहिए।

८. जिन ग्राहकों के पास जिस मास की "भक्ति" न पहुंचे, उनको स्थानीय पोस्ट आफिस में पूछ कर उस मास की अमावस्या से पूर्व कार्यालय में सूचना भेजनी चाहिये। स्थानीय पोस्ट आफिस में बिना पूछताछ किये अथवा अमावस्या के बाद सूचना आने पर 'भक्ति' नहीं भेजी जायगी।

९. पत्रोत्तर के लिये जवाबी कार्ड भेजना चाहिये।

विषय सूची।

विषय	पृष्ठ
१. मंगलाचरण	३६१
२. भक्ति का महात्म्य (गद्य) [ले० श्री पूज्य भोले बाबाजी अनूपशहर]	३६४
३. प्रेम से भगवत्प्राप्ति [ले० श्री पूज्य भोले बाबाजी अनूपशहर]	३६५
४. आयुर्वेद शिक्षा [ले० पं० राम रत्नलाल जी शास्त्री]	३७१
५. श्रीकृष्ण चरित्र [ले० भूमानन्द ब्रह्मचारी]	३७४
६. अखिल अमंगलों का आदि कारण [ले० पं० गंगा प्रसाद जी अग्निहोत्री जबलपुर]	३७८
७. पश्चात्ताप [ले० श्री स्वा० आनन्द भिक्षु सरस्वती वृन्दावन]	३८०
८. ऋषियों के आश्रम [ले० श्री पं० जयराम 'सनातन']	३८२
९. श्रद्धा [ले० श्रीमती सूरज देवी	३८४
१०. विशेषांक [सम्पादक]	३८७
११. छान्दोग्य सार	३८९
१२. भजन	३९०

ॐ

"कलौतु केवला भक्तिः।"

वार्षिक चन्दा २)

भक्ति

एक प्रति का)

जनता में भगवद्भक्ति भाव को जाग्रत करने वाली मासिक पत्रिका।

वर्ष २ } भगवद्भक्ति आश्रम रेवाड़ी, भाद्रपद पूर्णिमा सं० १९८५। { अङ्क १२

मङ्गलाचरण।

प्रह्लादनारदपराशरपुण्डरीकव्यासाम्बरीषशुकशौनकभीष्मकाद्याः।
रुक्माङ्गदार्जुनवसिष्ठविभीषणाद्या एतानहंपरमभागवतान्नमामि ॥ १ ॥

प्रह्लाद, नारद, पराशर, पुण्डरीक, व्यास, अम्बरीष, शुकदेव, शौनक, भीष्म, रुक्माङ्गद, अर्जुन, वसिष्ठ और विभीषणादि परम भागवतों अर्थात् भगवान् के बड़े भक्तों को नमस्कार करता हूं ॥ १ ॥

मेघश्यामं पीतकौशेयवस्त्रं श्रीवत्साङ्कं कौस्तुभोद्भासिताङ्गम्।
पुण्योपेतं पुण्डरीकायताक्षं विष्णुं वन्दे सर्वलोकैक नाथम् ॥ २ ॥

मेघ के समान श्यामवर्ण और पीले रेशमी वस्त्र धारण किये हुये, भृगुलता का है चिह्न जिनके और कौस्तुभ मणि से प्रकाशित है अंग जिनका, पुण्य करके युक्त

तथा श्वेत कमल के समान हैं नेत्र जिनके ऐसे सब लोगों के एक स्वामी विष्णु को मैं नमस्कार करता हूं ॥ २ ॥ (युधिष्ठिर)

अचिन्त्यमव्यक्तमनन्तमव्ययं विभुं प्रभुं भावितविश्वभावनम् ।
त्रैलोक्यविस्तार विचारकारकं हरिं प्रपन्नोऽस्मि गतिं महात्मनाम् ॥ ३॥

जो ध्यान में नहीं आते और प्रकट नहीं और जिनका अन्त नहीं तथा अविनाशी, समर्थ, सर्वव्यापी, तीनों लोकों के विस्तार के विचारने वाले और महात्माओं की गति ऐसे प्रभु हरि की शरण को प्राप्त होता हूं ॥ ३ ॥ (अर्जुन)

यदि गमनमधस्तात्कालपाशानुबन्धा–
यदि च कुल विहीने जायते पक्षिकीटे ।
कृमिशतमपि गत्वा ध्यायते चान्तरात्मा,
मम भवतु हृदिस्था केशवे भक्तिरेका ॥ ४ ॥

जो काल रूपी फांसी के बन्धन में पड़के नरक में गमन होय और जो कुलहीन पक्षी कीड़ा आदि में जन्म हो तो भी सैंकड़ों कीड़ों की योनियों में भी जाके अन्तरात्मा का यही ध्यान करके मांगता हूं कि केशव की मुख्य भक्ति मेरे हृदय में हो ॥ ४ ॥ (नकुल)

तस्य यज्ञवराहस्य विष्णोरतुल तेजसः ।
प्रणामं ये प्रकुर्वन्ति तेषामपि नमो नमः ॥ ५ ॥

यज्ञ वराह का रूप धरने वाले बड़े तेजस्वी विष्णु को जो नमस्कार करते हैं उन को भी मेरा वारम्वार नमस्कार है ॥ ५ ॥ (सहदेव)

अप्रमेय हरे विष्णो कृष्णदामोदराऽच्युत ।
गोविन्दानन्त सर्वेश वासुदेव नमोऽस्तुस्ते ॥ ६ ॥

हे अप्रमेय ! हरि ! विष्णु ! कृष्ण ! दामोदर ! अच्युत ! गोविन्द ! अनन्त ! और सब के स्वामी वासुदेव ! तुम को मेरा नमस्कार है ॥ ६ ॥ (सात्यकि)

गोविन्द केशव जनार्दन वासुदेव विश्वेश विश्व मधुसूदन विश्वरूप।
श्रीपद्मनाभ पुरुषोत्तम देहि दास्यं नारायणाऽच्युत नृसिंह नमो नमस्ते ॥

हे गोविंद, केशव, जनार्दन, वासुदेव, विश्व के स्वामी, विश्वरूप, श्रीपद्मनाभ, पुरुषोत्तम ! मुझे दास भाव हो। हे अच्युत, अविनाशी और हे नृसिंह ! तुम को वारंवार नमस्कार है ॥ ७॥ (अश्वत्थामा)

नमो नमः कारणवामनाय नारायणायामितविक्रमाय।
श्रीशार्ङ्गचक्रासिगदाधराय नमोऽस्तु तस्मै पुरुषोत्तमाय ॥ ८ ॥

कारण से वामन रूप धरने वाले जो आप हैं तिनको बारम्बार नमस्कार है। नारायण तथा बड़े पराक्रमी, श्रीयुक्त, शार्ङ्गधनुष, सुदर्शनचक्र तथा गदा के धारण करने वाले पुरुषोत्तम को मेरा नमस्कार है ॥ ८ ॥ (धृतराष्ट्र)

कृष्णाय वासुदेवाय देवकीनन्दनाय च।
नन्दगोपकुमाराय गोविन्दाय नमो नमः ॥ ९ ॥

कृष्ण, वासुदेव, देवकीनन्दन, गोप के कुमार जो गोविंद हैं तिन के लिये मेरा नमस्कार है ॥ ९ ॥ (विकर्ण)

नाथ योनिसहस्रेषु येषु येषु व्रजाम्यहम्।
तेषु तेष्वचला भक्तिरच्युतास्तु सदा त्वयि ॥ १० ॥

हे नाथ ! जिन जिन सहस्रों योनियों में मैं जाऊं, हे अच्युत ! उन उन योनियों में मेरी आप से अचल भक्ति हो ॥ १० ॥ [प्रह्लाद]

यस्य हस्ते गदाचक्रं गरुड़ो यस्य वाहनम्।
शंखचक्रगदापद्मो स मे विष्णुः प्रसीदतु ॥ ११ ॥

जिन के हाथ में गदा और चक्र है तथा गरुड़ जिनका वाहन है, शंख, चक्र, गदा और पद्म जिनके हाथ में है वह भगवान् विष्णु मेरे ऊपर प्रसन्न होवें ॥ ११ ॥ [सनत्कुमार]

भक्ति का महात्म्य ।

नराक छन्द ।

[ले० श्री० भोले बाबा अनूपशहर ॥

रहस्य वेद शास्त्र का पुराण का बताय है ।
सुनीति धर्म तर्क शास्त्र मर्म भी जताय है ॥
विरोध मेट देए तथ्य तत्त्व कूं दिखाय है ।
पढ़े सदैव भक्ति जो अखंड शांति पाय है ॥ १ ॥

असार छाड़ दे निकार सार पी पिलाय है ।
मिटाय भेद पांच हूं अभेद कूं लखाय है ॥
अभिन्न डाल पात आदि मूल में दिखाय है ।
पढ़े सदैव भक्ति जो अखंड शान्ति पाय है ॥ २ ॥

धनी बनाय देय है दरिद्रता मिटाय है ।
निवारि चित्त क्षुद्रता उदारता सिखाय है ॥
रहे न लेश मूढ़ता सुखी मुनी बनाय है ।
पढ़े सदैव भक्ति जो अखंड शान्ति पाय है ॥ ३ ॥

न काम पास आय है न क्रोध जी जलाय है ।
न क्षोभ होय लोभ से न दंभ ही सताय है ॥
समूल द्वन्द्व दे बहाय मोह भी जलाय है ।
पढ़े सदैव भक्ति जो अखंड शान्ति पाय है ॥ ४ ॥

शमादि छै बताय है विवेक भी सिखाय है ।
विराग में लगाय है मुमुक्षुता सुझाय है ॥
सदा महेश पाद मांहि प्रेम कूं बढाय है !
पढ़े सदैव भक्ति जो अखंड शान्ति पाय है ॥ ५ ॥

स्वरूप सांख्य योग का प्रमाण दे दिखाय है ।
यमादि का बताय मर्म भक्ति में लगाय है ॥
सुखेन रामकृष्ण ध्यान भक्त कूं सुहाय है ।
पढ़े सदैव भक्ति जो अखंड शांति पाय है ॥ ६ ॥

लगाय धर्म कर्म में अधर्म से बचाय है ।
क्षमा दया बढाय, द्वेष क्रूरता मिटाय है ॥
महंत संत भक्त की कथा घनी सुनाय है ।
पढ़े सदैव भक्ति जो अखंड शांति पाय है ॥ ७ ॥

असत्य सत्य छांट देय भेद भूल खोय है ।
बढ़ाय पुण्य पुंज कूं सकल पाप धोय है ॥
भगाय शोक मोह जन्म मृत्यु भी भगाय है ।
पढ़े सदैव भक्ति जो अखंड शांति पाय है ॥ ८ ॥

प्रेमसे भगवत्प्राप्ति

(ले० श्री भोले बाबा अनूपशहर)

यस्य देवस्य भावेन भेद बुद्धिर्विनश्यति ।
ईशा व्याप्तं जगद्भाति तं वन्दे शाश्वतं शिवम्

छप्पय

जो जग सो जगदीश ईश नहिं जग से न्यारा
सब से करिये प्रेम प्रेम भगवत् कूं प्यारा ॥
नहीं राग नहिं द्वेष लेश काहू से कीजे ।
क्या अपना क्या गैर वैर सब से तजदीजे ॥
पर पीड़ा बड़ पाप है प्रेम परम उपकार है ।
भोला चारों वेद का यही निकाला सार है ॥१

पाठक प्रिय पाठक ! परम प्रिय पाठक !..! भगवान् प्रेम रूप हैं, प्रेम से भगवत् प्राप्ति होती है, भगवत् प्राप्ति ही मनुष्य शरीर प्राप्ति का परम प्रयोजन और अंतिम फल है। जो जगत् है, सो ही भगवत् है, जगत् में और भगवत् में रंचक भेद नहीं है, इसमें प्रमाण वेद है, जीव मात्र से प्रेम करना ही भगवत् से प्रेम करना है, इसी का नाम भक्ति है, यह ही श्रेय-कल्याण का परम उपाय है। कहा भी है:-

बिना प्रेम रीझै नहीं, नागर नंद किशोर ।

प्रेम रूप भगवत् सर्वत्र व्यापक हैं और भगवत् का अंश होने से जीव भी सर्वत्र व्यापक है, फिर भी जीव को अपनी व्यापकता प्रतीत क्यों नहीं होती? जीव अपने को अल्प क्यों मानता है ? सर्व व्यापक क्यों नहीं मानता ? इस का कारण यह है कि राग द्वेष से जीव की बुद्धि ढक गई है, राग द्वेष के कारण मनुष्य को भिन्नता दिखाई देती है. भिन्नता देखने से मनुष्य अपने को साढ़े तीन हाथ का मानता है और अपने से भिन्न दूसरों को भी शरीर वाला मान कर किसी से राग किसी से द्वेष करता है। राग द्वेष ही सर्व अनर्थ का कारण है। यदि मनुष्य राग द्वेष का त्याग कर दे तो स्वभाव से वह सुख रूप ही है। सब में सर्वात्म भाव करने और चराचर जीवों में अपने समान ही प्रेम करने से राग द्वेषकी निवृत्ति हो जाती है और जीव प्रेम रूप भगवत् को सर्वत्र व्यापक देखता है फिर उसे कभी मोह अथवा शोक नहीं होता ! सर्वात्म भाव से सब प्राणियों में प्रेम करने वाले सत्य पुरुषों का नीचे 'भक्ति' के प्रेमी पाठकों ! आप को दिग्दर्शन कराते हैं, आशा है कि यह हमारा परिश्रम निष्फल नहीं होगा और आप के चित्त में भगवद्भक्ति का अंकुर उत्पन्न हो करके ऐहिक, पारलौकिक और पारमार्थिक सुख की आप को प्राप्ति करावेगा ! एवमस्तु ।

अशोक और भिक्षु का संवाद ।

देखो ! पटना शहर से गंगापार बड़ा भारी मैदान है, आज कल इसको हरिहर क्षेत्र कहते हैं पहिले कभी यहां जंगल था, इस जंगल में दो मनुष्य बात चीत कर रहे हैं। एक इन में से शिकारी कपड़े पहिने हुये हैं, इसके कंधे पर धनुष रक्खा हुआ है कमर से तलवार बंधी हुई है, इसके शरीर के अंगों में शूरता झलक रही है, बांका जवान है। दूसरा गेरुये

वस्त्र धारण किये हुये बूढ़ा मनुष्य है, बूढ़ा होने पर भी मुख की कांति शांतिमय है, इसकी बग़ल में एक घायल पक्षी है और उसके पास ही एक चोट खाया हुआ हिरन का बच्चा खड़ा हुआ है, उसको वह एकाग्र मन होकर देख रहा है। इन दोनों की बात चीत सुनोः-

शिकारीः बुड्ढे ! तू कौन है कहां रहता है और यह क्या कर रहा है ?

बुड्ढाः मैं भिक्षु हूं, गुरु के नाम पर सब प्राणियों की सेवा करने का मैंने व्रत धारण किया है, यहांसे आधे मील पर १ विहार स्थान है वहां रहता हूं।

शिकारीः बता ! इस पक्षी को तूने बगल में दाब रक्खा है और इस हिरन के बच्चे को तू बड़े ध्यान से देख रहा है, इससे तेरा क्या अभिप्राय है ?

भिक्षुः बच्चा ! जो कुछ कहना था, कह दिया ! क्या मुझे अभी कुछ और कहना है ? सुन बुद्धदेव की आज्ञा है, सब प्राणियों की रक्षा करो ! बुद्धदेव के सब शिष्य यह ही व्रत धारण करते हैं, यह पक्षी किसी के बाण से घायल हो गया है और हिरन का बच्चा भी इसी प्रकार घायल हुआ है। प्रातः काल का नित्य कर्म करके मैं यहां टहल रहा था, घायल पक्षी मेरे पैरों से आकर चिमट गया, मैंने उसे गोद में लेलिया और आश्वासन देने लगा। इतने ही में हिरन का बच्चा लंगड़ाता हुआ, मेरे पास आकर लोट गया, मैंने उसका घाव पोंछा और कपड़ा फाड़ कर घाव पर बांध दिया, रक्त निकलना बंद हो गया है। अब मैं विचार कर रहा हूं कि इनको किसी प्रकार विहार स्थान में ले जाऊं और वहां इनकी दवा दारु करके फिर इनको जंगल में छोड़ दूं। विहार स्थान यहां से कुछ दूर है, मैं बूढ़ा हूं, यह सोच रहा हूं कि इस बच्चे को किस प्रकार उठाऊं, जिस से इसको दुःख न हो और मैं सहज में विहार स्थान तक पहुंच जाऊं। दूसरा कोई भिक्षु आस पास दिखाई नहीं देता, इस सोच विचार में पड़ा हुआ हूं।

शिकारीः पाखंडी साधु ! यह सब तेरी छल कपट की बातें हैं। तू इनका मांस खाना चाहता है, इसी लिये इनको लिये जाता है ! सुन ये दोनों मेरे बाण से घायल हुये हैं। मैंने ही इनको मारा है इन पर मेरा अधिकार है, तेरा अधिकार कुछ नहीं है ! दूसरे के माल पर तू अधिकार जमाना चाहता है, ऐसा नहीं हो सका, पराये के माल को बकरा नहीं खा सक्ता ! इनको यहां ही रखदे और सीधा अपने मार्ग चलाजा।

भिक्षुः (शिकारी को विचार दृष्टि से देख कर क्षत्री ! आज तक आर्य धर्म के भिक्षु को किसी ने ऐसे दुर्वचन नहीं कहे ! न कभी इस प्रकार अनादर किया ! मालूम होता है तू धर्म को नहीं जानता, या तूने आज तक भगवान् बुद्ध का नाम नहीं सुना . जिन्होंने सारे जगत् के कल्याण के लिये अपना सब राज पाठ त्याग दिया, संसार को सर्व क्लेशों से मुक्त किया और निर्वाण मार्ग दिखलाया उनके शिष्य शाक्य मुनि का नाम भी तूने नहीं सुना है। अच्छा अब मैं तुझसे कहता हूं, हमारे गुरु की आज्ञा हैः-दुखियों की मदद करो, रोगियोंको दवा दो, अज्ञानियों को विद्या दो, भूखों को अन्न दो, प्यासों को पानी दो . और नंगों को वस्त्र दो ! हम लोग भिक्षु बनकर अपने सामर्थ्यानुसार धर्म का पालन करते हैं, हे क्षत्री . तूने बिना जाने हुये मुझसे ऐसे दुर्वचन कहे हैं, तेरे कहे का मैं बुरा नहीं मानता ! अपनी २ समझ है तू मुझे चाहे और भी गालियां देले, किंतु इन दुःखी पशुओं को मुझ से मत छीन ! इनके

बदले में तू मुझे मार दे, मुझे जान प्यारी नहीं है, ये साधु समझ कर मेरी शरण में आये हैं जान जाय तो भले चली जाय, जीते जी शरण में आये हुओं को हम अलग नहीं करते ! मुझे धर्म के पालन करने का अवसर मिला है, मुझे धर्म के पालने से वंचित करना तुझे उचित नहीं है।

क्षत्री: (जी में) ओहो ! ऐसा साधु मैंने आज तक नहीं देखा और न ऐसी बातें कभी मेरे सुनने में आई, किंतु मुझे इस साधु का विश्वास नहीं है, विहार स्थान में चल कर इसके सत्य असत्य की परीक्षा करनी चाहिये ! (प्रत्यक्ष) अच्छा ! मैं इस घायल हिरन को अपनी पीठ पर लाद कर लिये चलता हूं, इस को विहार स्थान तक पहुंचा दूंगा !

भिक्षु: नहीं . मैं जानता हूं तेरी नियत क्या है, तू अधर्मी है, अधर्म करने के कारण से तुझे मेरा विश्वास नहीं है ! तू मेरे साथ भले ही चल किंतु इन प्राणियों को हाथ मत लगा ! यह तेरी शकल से घृणा करते हैं और तेरे शरीरकी गंधभी इनको अच्छी नहीं लगती, तेरे छूने से इन्हें दुःख होगा ! हां ! तू इतना कर कि हिरन को उठा कर मेरी पीठ पर लाद दे और कपड़े से कस कर बांध दे !

क्षत्री हिरन को हाथ लगाता है, कहां तो वह आराम से भिक्षु के सामने पड़ा था, हाथ लगाते ही चिल्लाता है, पक्षी भी चीखने लगा है।

भिक्षु: क्षत्री ! तू देखता नहीं है, इनको तुझ से घृणा है, ये तुझ से डरते हैं, देख ! किस प्रकार मुझ से चिपटे जाते हैं, यद्यपि मेरे पास आये इन्हें आधी घड़ी भी नहीं हुई !

क्षत्री: वाह ! यह सब कहने की बात है पशुओं में इतनी बुद्धि कहां से आई ?

भिक्षु:-क्षत्री ! तू अभी तक धर्म को नहीं जानता, बुद्धि से रहित, पशु, पक्षी वृक्ष आदि कोई भी नहीं है ! जिसका जैसा शरीर है, उसी के अनुसार उस में बुद्धि भी है तूने देखा होगा जब चिड़ीमार बहेलिये गली में से होकर निकलते हैं तो कुत्ते कौवे उनको देख कर चिल्लाने लगते हैं, साधुओं को देख कर वे ऐसा नहीं करते ! भयानक जंगल के पशु नये साधु को देख कर आप पूंछ हिलाते हुए उनके पास चले आते हैं। उनको हिंसक और अहिंसक की पहचान है हिंसक को देख कर वे दूर भाग जाते हैं। वृक्ष भी प्रेम की दृष्टि से देखने से प्रसन्न होता है। हमारा धर्म अहिंसा है, "अहिंसा परमो धर्मः" यह बुद्धदेव का वचन है।

क्षत्री आश्चर्य कर रहा है। साधु की निर्भीकता और प्रेम का उसके चित्त पर बड़ा ही प्रभाव हुआ दीखता है, चुप खड़ा हुआ है और साधु उससे मदद मांगे, इस बात की प्रतीक्षा कर रहा है। साधु भी उससे बोलता नहीं है हिरन को स्वयं ही अपनी पीठ पर लाद कर और पक्षी को बगल में दाब कर विहार स्थान को जा रहा है, क्षत्री भी उसके पीछे २ हो लिया है। आओ पाठक हमारे पीछे आप भी चले आओ . देखो ! विहार स्थान सामने दिखाई दे रहा है, कई युवा भिक्षु बूढ़े भिक्षु को देख कर दौड़े हुये आरहे हैं, एक ने हिरन को बुड्ढे की पीठ पर से उतार लिया है, सब के सब चुप चाप विहार स्थान के भीतर जा रहे हैं !

विहारस्थान ।

ओहो . विहारस्थान क्या है ? यह तो नई दुनियां है ! आप ने पहिले कभी नहीं देखी होगी !

देखो ! चारों तरफ पक्की २ कोठरियां बनी हुई हैं। स्थान २ पर पशु पक्षी निर्भय हो कर घूम रहे हैं ! यहां पर कोढ़ियों खजेलों की चिकित्सा हो रही है। भिक्षु अपने हाथों से उन के घावों को धोकर मरहम पट्टी कर रहे हैं, यहां रोगियों को दवा बट रही है इन पक्षियों के घावों पर पट्टी बंध चुकी है, ये यहां वृक्षों पर बैठे हुए हैं। यहां गाय, भैंस, बकरी हिरनों का इलाज हो रहा है, इस मैदान में पट्टी बंधे हुए पशु आराम से बैठे हुए हैं, घूम रहे हैं और उगाली कर रहे हैं ! देखो ! यह पाठशाला है, विद्यार्थी पढ़ रहे हैं अध्यापक बड़े प्रेम से पढ़ा रहे हैं ! यहां मत मतांतरों पर शास्त्रार्थ हो रहा है, इस कमरे में कचेहरी हो रही है, शहर के लोग अपने झगड़े और मुकद्दमों का यहां फैसला कराने आते हैं ! न्याय पूर्वक न्याय किया जाता है ! राजा के यहां से भी यहां अधिक भीड़ है ! विहारस्थान क्या है ? सचमुच धार्मिक जगत् है ! कितना लम्बा चौड़ा सुहाना स्थान है, बीच में कई बीघों का पक्का सरोवर है, किनारे पर सुन्दर बेल बूंटे लगे हुए हैं ! ये भिक्षु हाथ में हथौड़ा लिए मूर्तियां घड़ रहे हैं, सब के मुख प्रसन्न हैं ! विहारस्थान डेढ़ दो मील से कम लम्बा चौड़ा नहीं है, कई हजार साधु यहां रहते हैं विहारस्थान क्या है छोटा सा कसबा ही है !

देखो ! यह वह ही भिक्षु है, जिस को हमने जङ्गल में देखा था, गरम पानी से हिरन और पक्षी के घावों को धो रहा है, दोनों के घाव धोकर मरहम पट्टी बांध कर अब उन्हें विहार में छोड़ दिया है, दोनों वृक्षों की छाया में आराम से बैठ गए हैं, अपने उपकारक को प्रेमकी दृष्टिसे देखरहे हैं . कई और पक्षी भिक्षु के पास चूं चूं करते हुए आ गये हैं, भिक्षु उनकी पीठ पर प्यार से हाथ फेर रहा है ! दवा ,दे चुका है ! देखो ! कोई भिक्षु पशुओं को घास डाल रहा है, कोई दाना चुगा रहा है ! ये बौद्ध साधु पूरे अहिंसक हैं, न तो यह किसी से डरते हैं और न कोई इन से डरता है, भगवान के गीता में कहे हुये, "ज्ञानी को किसी का भय नहीं होता और न ज्ञानी से किसी को भय होता है" इस वचन का यहीं पूर्ण रीति से प्रयोग होता हुआ देखने में आता है ! जंगल में देखा हुआ हमारा मित्र क्षत्री भिक्षुओं के कृत्य को आश्चर्य की दृष्टि से देख रहा है ! भिक्षु अपने काम काज में अभी तक लग रहा था, क्षत्री की तरफ उसका ध्यान नहीं था, अब वह काम से निवृत्त हो गया है, उसकी दृष्टि क्षत्री की तरफ जाती है, मुसकरा कर कहता है।

भिक्षु: क्षत्री ! क्या तुझे मेरी बातका विश्वास आया ? हम बुद्ध भगवान् के दास और चराचर के सेवक हैं, यथा संभव हम ऐसा कोई काम नहीं करते जिसके करने का बुद्ध गुरु ने निषेध किया हो।

एक और भिक्षु आकर इस भिक्षु के कान में कुछ कहता है, भिक्षु हंस कर खड़ा हो कर कहता है

भिक्षु: ओहो ! महाराज अशोक ! मैंने अभी तक आप को क्षत्री के नाम से पुकारा है, मैं आपको जानता नहीं था, आप की जय हो ! हम भिक्षुओं को राज दरबार में जाने का काम नहीं पड़ता, इस लिये हम देश के राजा को पहिचानते नहीं हैं ! आप देखते हैं, हम तन, मन वचन से आप के राज्य की सेवा कर रहे हैं, देखिये यह लड़के हमारे यहां राजधानी से पढ़ने आये हैं, इनको यहां धर्म की शिक्षा मिलती है, ये पक्के राज भक्त होंगे ! देखिये यह लड़ने झगड़ने वाले जैसे साधुओं के न्याय से राजी

होते हैं, वैसे न्यायाधीश के न्याय से राज़ी नहीं होते। चिकित्सा आदि करना भी राज का काज ही है। ये सब काम हम बदला लिए बिना ही करते हैं। जो कोई हम से धर्म का उपदेश लेना चाहता है, उसे हम धर्म की शिक्षा देते हैं। राजन् ! आप की जय हो। हम सब भिक्षु आप को आशीर्वाद देते हैं कि आप का राज्य धर्म का राज्य हो। आप के राज्य को प्राप्त करके प्रजा राम के राज्य को भी भूल जाए। तथास्तु !

अशोक: भगवन ! मैंने आप को छली और कपटी कहा था, ये वचन भूल से मेरे मुख से निकल गये थे, क्या आप मुझे क्षमा दे सकते हैं ?

भिक्षु:-(हंसकर) राजन् ! आपने तो ये वचन भूल में कहे थे, जो कोई जान बूझ कर भी हम को गाली देता या दुर्वचन कहता है तो उसे हम सदा क्षमा करते हैं ! जो हमारे साथ बदी करता है हम नेकी करते हैं, जो हम से वैर करता है हम उससे प्यार करते हैं जो हम को मारने को लात उठाता है हम उसके पैरों में से कांटे निकालते हैं, और जो हम को हाथ से मारता है, हम उसके शरीर पर प्यार से हाथ फेरते हैं, यह हमारा धर्म है ! भगवान बुद्ध की आज्ञा है: 'संसार के प्राणी मात्र पर प्यार करो, उनके अपराध मत देखो ! वे अज्ञानी हैं, अज्ञानी का अज्ञान ही जड़ता है; ज्ञानी के तो सब प्राण हैं, हम उन से वैर कैसे करें' ! धर्म पद ग्रन्थ में बुद्धदेव कहते हैं: 'जैसे टूटे हुये छप्पर में से जल की बूंदें टपकती हैं ऐसे ही अज्ञानियों के हृदय में से अशुद्ध और हानि कारक संकल्प निकलते हैं और जैसे अच्छे छप्पर पर से पानी बह जाता है, टपकता नहीं है वैसे ही ज्ञानियों पर किया हुआ क्रोध उनके चित्त पर ठहरता नहीं है और न उनकी कुछ हानि करता है"। दूसरे स्थल पर सद्गुरु का वचन है:-'जो धर्म को जानता है, वह ही धार्मिक है, जिस में वैर अज्ञान, द्वेष और ईर्षा नहीं है, वह ही बुद्ध का शिष्य और बुद्ध धर्म का भिक्षु है। एक स्थान पर कहा है:-जिस में क्रोध नहीं है, उसको शान्ति की नींद आती है, जिसने, क्रोध को मन में से निकाल दिया है, उस के पास दुःख नहीं फटकता !' एक यह वचन है:-'क्रोध को जीतने से बढ़ कर दूसरा कोई काम नहीं है क्रोध से अग्नि उत्पन्न होता है, वह क्रोधाग्नि क्रोध करने वाले को प्रत्यक्ष अग्नि के समान जलाता रहता है ! जो घृणा के बदले घृणा करता है, उसको शांति नहीं प्राप्त होती ! जो घृणा के बदले प्यार करता है, उसको शांति प्राप्त होती है, यह ही धर्म है ! जय करने से घृणा उत्पन्न होती है क्योंकि पराजय को प्राप्त हुआ दुःखी होता है, जिसने जयपराजय दोनों का त्याग कर दिया है, वह ही सुखी और शांत है !' धर्म पद में लिखा है:-'किसी के साथ तू तड़ाक करके मत बोलो क्योंकि वह भी तू तड़ाक करेगा, इस से दुःख होगा।' भगवान् एक प्रसंग पर कहते हैं: 'ज्ञानी वह है जिसने मन, वचन और शरीर को वश में कर लिया है !' हे राजन् ! आप समझ लीजिये, आपके वचनों का मुझे ध्यान भी है या नहीं ! सुनिये:-

खोद खाद धरती सहे काट्यो कूटी वृक्ष ।
कुटिल वचन साधु सहे समदर्शी निर्पक्ष ॥

हम सब धर्म के सेवक हैं, हमारा अनादर चाहे जो कोई कर जाओ हम किसी का अनादर नहीं करते ! ऐसा करें तो हम को आर्य भिक्षु कौन कहे ? हम बुद्ध गुरु के शिष्य कब कहलावें।

भिक्षु के नित्त आकर्षक वचन और शिक्षा

प्रद सच्ची हित कारिणी वाणी सुन कर अशोक का हृदय प्रेम से पूर्ण हो गया है और नेत्रों द्वारा बाहर निकल आया है उसकी शीतल और डब डबाई आंखों में से आंसू निकल पड़े हैं, हाथ जोड़ कर भिक्षुओं से जाने की आज्ञा मांगता है। महल पर पहुंच कर दिन भर आज के दृश्य पर विचार करता हुआ कुछ रात बीते पलंग पर जा पड़ा है, आधी रात हो गई है, बिचारते २ अब उसे नींद आ गई है, सवेरा होते ही विचार करता है:-

ओहो ! कल मैंने सच मुच सच्चे धर्म का दृश्य देखा था ! अभी तक मैं किसी धर्म पर आरूढ नहीं हूं मुझे किसी न किसी धर्म का अवश्य अनुकरण करना चाहिये ! उन भिक्षुओं का धर्म जीता जागता धर्म है ! क्षण भर में काया पलट कर देता है। आर्य धर्म के भिक्षु निःसंदेह धर्म की जीती जागती मूर्ति हैं ! इनका जीवन कर्म रूप है ! इनका धर्म मात्र ग्रंथों में नहीं है किंतु इनके शरीर, मन, बुद्धि, वाणी और कर्म रूप धर्म है, वाद विवाद को धर्मःसे कुछ लाभ नहीं होता ! उलटी उससे अशांति होती है।

इतना विचार कर अशोक भिक्षुओं का शिष्य हो गया ! उसने न्याय पूर्वक राज्य किया, उसके राज्य में शेर बकरी एक घाट पर पानी पीते थे, पुत्र माता पिता की सेवा करता था, स्त्री पति के प्रेम में संलग्न रहती थी, जितने मठ थे, चिकित्सालय, विद्यालय, और न्यायालय बन गये थे, भिक्षु निष्काम बिना बदला लिये शिक्षा देते थे, चिकित्सा करते थे। और न्याय करते थे ! अधिक क्या कहें, अशोक का समय इतिहास का सुवर्णमय समय है और संसारी, विषयासक्त, राग द्वेष युक्त मनुष्यों की आखें खोल कर उनको असंसारी, वैराग्यवान् और समदर्शी बनाने वाला है !

पाठक ! भक्ति बिना ज्ञान नहीं होता, ज्ञान बिना मुक्ति नहीं होती ! भक्ति का साधन निर्मल प्रेम है, प्रेम बिना भक्ति प्राप्त नहीं होती ! पुराण पढो, शास्त्र पढो, वेद पढो, जब तक परस्पर रागद्वेष है, तब तक पढना पढाना निष्फल है। यदि आपको भुक्ति मुक्ति की इच्छा है तो रागद्वेष का त्याग कीजिये, सब से निष्कपट निःस्वार्थ प्रेम कीजिये। प्रेम रूप भगवान् सर्वत्र व्यापक हैं, कृपणता दोष ने हमारी आंखों पर स्वार्थ की पट्टी बांध कर हमारी आंखें मींचदी हैं। हमको कृपणता त्याग कर उदार बनना चाहिये। कृपणता हम को संकुचित करती है, उदारता बिस्तृत करती है. कृपणता आखें बंद करने वाली है. उदारता आंखें खोलने वाली है कृपणता रागद्वेष की मूल है, उदारता प्रेम का बीज है, कृपणता बंधन करने वाली है, उदारता मुक्त करने वाली है ! स्वभाव से ही अथवा पूर्व ऋषि मुनियों के प्रताप से भारत भूमि परम उदार है, तेतीस करोड़ प्रजा का पालन पोषण करती है। मीठे सरोवर पर पशु पक्षी सभी पानी पीने आते हैं, खारी पर चिड़िया तक नहीं जाती। कोई विदेश से यहां आकर राजा के नाम से चौकीदारी करता है, कोई जुलाहा बन कर कपड़े लेकर आता है, कोई लुहार बन कर चाकु उस्त्रे ले कर आता है, कोई बढ़ई बन कर लकड़ी के खिलोने लेकर आता है और कोई कुम्हार बन कर मिट्टी के बर्तन लेकर आता है, इन सब आने वालों का उदार भूमि यथा योग्य पेट पालन कर ही देती है, उदार माई के द्वार पर से कोई निराश नहीं जाता। सुनते हैं कि यहां तीन करोड़ भिखमंगे मुफ्तखोरे हैं उदार माई के पुत्र थे

भी माई की गोद में बैठ कर ठाले ही मौज करते हैं। भला जो बैठे ठालों और विदेशियों का पेट भरती है, वह काम करने वालों को भूखा क्यों रक्खेगी? उदार भूमि में जन्म लेकर हम को कृपण क्यों बनना चाहिये? उदार माता के पुत्र उदार ही होने चाहियें! भाई! मुफ्त कोई नहीं खाता, मुफ्त कोई वस्तु नहीं मिलती। सब अपने २ किये हुये का अथव. करके ही खाते हैं। रागद्वेष के कारण हमारी आंखें बंद हो गई हैं। इसलिये दूसरे को देख कर ईर्षा द्वेष करते हैं। सब अपनी अपनी प्रारब्ध का खाते हैं। दाने २ पर मोहर है। उदार बन जाइये, सब में प्रेम बढ़ाइये प्रेम रूप भगवान सब के हृदय में विराजमान हैं, प्रेम किया और प्रगट हुये, प्रगट होते ही सब दुःख दर्द दूर हो जांयगे, भगवन् सर्वत्र व्यापक नज़र आवेंगे। सब क्लेश मिट जायंगे, संसार सुख रूप हो जायगा। न मोह होगा न शोक, सदा के लिय अशोक हो जाओगे।

सकल चराचर विश्व में ओत प्रोत भगवान।
भोला! सब से प्रेम कर यही भक्ति सच मान॥

आयुर्वेद शिक्षा।

[१० वें अंक से आगे॥]

(ले० पं० रामरक्षपाल वैद शास्त्री)

मनुष्य को दांत जितने स्वच्छ रखने चाहियें उतने न रखने से दांतों में अधिक रोग हो जाते हैं। यद्यपि दांतों को प्रातः काल साफ करते हैं परन्त दूषित मंजन, मिट्टी, कोयला राख आदि से रगड़ने से, तिनके से दांत कुरेदने की बुरी आदत से, अन्न का अंश दांतों में लगा रहने से (जो कि शुष्क होकर दांतों पर पपड़ी सी जम जाता है) दांत तथा मसूड़े कमज़ोर हो जाते हैं और इससे दंत शूल दंतकृमि आदि रोग उत्पन्न हो जाते हैं। अतः भोजन के बाद तथा कुछ भी खाने के बाद साफ जल से दांतों को अच्छी तरह साफ करलेना चाहिये। बहुत से मनुष्य भोजन के बाद दांतों को साफ कर लेते हैं परंच दिन में जब कभी कुछ पदार्थ खाते हैं तब कुछ भी परवाह नहीं करते मामूली कुल्ले तक भी नहीं करते अतः उनके अनेक दन्त रोग उत्पन्न हो जाते हैं। इसलिये निम्नलिखित नियमों पर सदैव ध्यान रखना चाहिये।

प्रतिदिन नियमित रूप से प्रातः काल दतौन या मञ्जन से दांतों को अवश्य साफ करना चाहिये।

जिस समय कुछ भी पदार्थ खाओ उसी समय दांतों को खूब भली प्रकार साफ कर लेना चाहिये।

खराब मिट्टी, कोयला, तथा अन्य राख, और दूषित चीज़ों से साफ न करे।

हर वक्त तिनके आदि से दांत कुरेदते रहने की आदत न डालनी चाहिये।

दांतों को अधिक खट्टे पदार्थ अमचूर, खट्टा दही आदि, अति गर्म भोजन, अति शीत पदार्थ जैसे बर्फ आदि का स्पर्श न होने देना चाहिये।

इन नियमों पर ध्यान देता हुआ दतौन या मंजन करने के बाद गण्डूष (कुल्ले) करे।

उक्तञ्च

गण्डूषमथ कुर्वीत शीतेनपयसा मुहुः ।
कफतृष्णामलहरं मुखान्तः शुद्धिकारकम् ॥

फिर शीतल जल से बहुत कुल्ले करे जिससे कफ प्यास मुख का मैल दूर होता है।

अन्यच्च

सुखोष्णोदक गण्डूषः कफारुचि मलान्तकः।
दन्तजाड्याहरश्चापि मुखलाघवकारकः ॥

मामूली गर्म जल से कुल्ला करने से कफ, अरुचि और मल का नाश होता है दांतों की जड़ता दूर होती है और मुंह हलका होता है।

मुखप्रक्षालं शीत पयसा रक्तपित्तजित् ।
मुखस्य पीडा शोषश्च नीलिकाव्यंगनाशनम् ॥

शीत जल से मुख धोने से मुख की पीड़ा, शोष और मुख पर के नीले, और पीले दाग दूर होते हैं।

कुर्याद्द वापिकवोष्णेन पयसाऽऽस्यविशोधनम् ।
कफ वातहरं स्निग्धं मुखशोषविनाशनम् ॥

थोड़े गर्म जल से मुंह धोने से कफ वात और मुख की सूजन का नाश होता है तथा मुंह की सुंदरता और चिकनाई बढ़ती है।

आरोग्य संबंधी नियम

स्थूल देह का मोटा होना ही सच्ची आरोग्यता नहीं है किन्तु स्थूल शरीर और सूक्ष्म देह (आत्मा) इन दोनों का निर्विकार होना ही सच्ची आरोग्यता है।

शरीर और आत्मा की जिस नियम से उत्तरोत्तर उन्नति होती रहे वही सच्चा नियम है।

यही नहीं कि अच्छे पदार्थों के सेवन से ही शरीर आरोग्य होगा किंतु सद्गुण और सदाचार पर आरोग्यता अधिक निर्भर है। सद्गुणी और सदाचारी मनुष्य का आरोग्य होना ही सच्चा व प्रसंशनीय आरोग्य है।

स्थूल शरीर और सूक्ष्म शरीर दोनों का बहुत ही घनिष्ठ संबन्ध है। एक के बिना दूसरे का ठीक रहना असम्भव है अतः स्थूल शरीर को उस का पथ्य मिलना चाहिये, और सूक्ष्म को उस का पथ्य। स्थूल शरीर का पथ्य नियमित भोजन व्यायामादि है। और सूक्ष्म शरीर का पथ्य ईश्वराराधन सद्गुण और सदाचारादि हैं।

जैसे ज्वर, खांसी अतिसार आदि रोग स्थूल देह के हैं, उसी प्रकार काम, क्रोध, मोह, द्रोह आलस्यादि आत्मा के रोग हैं।

स्थूल शरीर के रोग, पहिले शरीर को दुर्बल करके पश्चात् आत्मा को दुर्बल करते हैं। इसी प्रकार आत्मा के रोग प्रथम आत्मा को दुर्बल करके फिर स्थूल शरीर को दुर्बल बना देते हैं।

सात्विक आहार, परोपकार, क्षमा, स्वार्थ त्याग, उत्साह, स्वजन प्रेम, और स्वदेश सेवा आदि श्रेष्ठ गुण आत्मा को बलवान् करते हैं और शरीर को भी आरोग्य देते हैं।

शरीर, और आत्मा जहां निर्विकार होंगे वहीं आयु वृद्धि, आरोग्य, आनन्द और कीर्ति आदि की वृद्धि होवेगी।

निम्न लिखित कारणों से स्वास्थ्य ख़राब हो जाता है।

हरेक के ऊपर क्रोध करते रहना।

अनियमता से कार्य करना अथवा आलस्य

में जीवन व्यतीत करना।

किसी विषय में कुछ कारण न होते हुए भी चिंता करते रहना।

पच्चीस वर्ष की अवस्था से पहले ही ब्रह्मचर्य का भंग कर देना।

विवाहित पुरुष का अमर्याद स्त्री सेवन करना

मिर्च, अमचूर की खटाई आदि अधिक मसालेदार पदार्थों का सेवन करना. पेट भरने पर भी स्वादिष्ट होने के कारण अधिक खाना।

भोजन करने के आठ, नौ, घंटे व्यतीत होने के पहले ही बीच २ में जो कुछ नज़र में आवे कच्चे पक्के पदार्थ पेट में डालते रहना।

हमेशा झुक कर बैठने का अभ्यास डालना।

अशुद्ध हवा में रहना, घर की खिड़कियां व दरवाजे बंद करके, मुंह को कपड़े से ढककर रात भर सोते रहना।

सूर्य के उजियाले व धूप से डरते रहना और इनको रोकने के लिये घर की खिड़कियां बंद करना और दर्वाजे पर पड़दे डाले रखना।

रात में अधिक जागना और प्रातःकाल में बहुत सूर्य चढ़ने पर उठना।

प्रत्येक मनुष्य के छिद्र ढूंढते रहना और अपने मन में जलते रहना।

प्रातःकाल में न उठकर और स्नानादि नित्य न करके घंटा, आधघंटा, ईश्वर के स्मरण में न लगा कर तमाम दिन संसार के कामों में निमग्न (डूबे) रहना।

गरम २ पदार्थ खाना।

गांजा, सुलफा, शराब, अफीम, और काफी आदि का व्यसन करना।

गुरु पदार्थ (जो जल्दी हज़म न हो सकें) खूब खाते रहना।

जल्दी भोजन करना अर्थात् प्रत्येक ग्रास को ३२ बार न चबा कर निगल जाना।

भोजन के समय या पश्चात् अधिक जल पीना

रात में बहुत देर में भोजन करना और भारी पदार्थ पेट भर के खाना और भोजन करते ही निद्रा में सो जाना। सुबह बासी अन्न खाना, और सोडा-वाटर, बर्फ, पाचक चूर्ण आदि का अधिक सेवन करना।

मैले कुचैले खराब वस्त्र पहिनना।

स्नान करते समय अच्छे प्रकार शरीर को न मसल कर दो चार लोटे पानी के शरीर पर इधर उधर डाल लेना।

खराब पानी, पीने तथा स्नान के काम में लेना।

परिश्रम तथा स्नान करने के बाद तुरंत भोजन करना। भोजन करने के बाद तुरंत स्नान करना या परिश्रम करना।

निद्रा और आहार बढ़ाने से बढ़ते हैं और घटाने से घट सकते हैं अतः इनको अधिक बढ़ाना।

स्वास्थ्य रक्षा की इच्छा वाले मनुष्य इनको त्याग कर संसार में सुख के भागी बनें।

क्रमशः

श्रीकृष्ण चरित्र।

गतांक से आगे।

एक बार श्रीकृष्ण जी बलदेव और ग्वाल बालों सहित गाय चराते चराते वृन्दावन से बहुत दूर निकल गये। वनमें कड़ाके की गर्मी पड़ती थी, उस कड़ी धूप में सघन छाया वाले सुन्दर वृक्षों को देखकर श्रीकृष्ण ने अपने मित्रों से कहा कि, हे मित्रो! इन बड़भागी वृक्षोंको तो देखो, यह कैसे भाग्य शाली हैं, सर्वदा परोपकार ही करते हैं; वर्षा, शीत, धाम स्वयं सह कर इन से अपने शरणागतों को बचाते हैं। अहो! इन वृक्षों का जीवन धन्य है, जिनसे हम सब लोग सुख पाते हैं। इस संसार में उन्हीं पुरुषों का जन्म सफल है जो कि प्राण, धन, बुद्धि और वाणी से सर्वदा दूसरों का भला ही किया करते हैं। श्रीकृष्ण जी इस प्रकार वृक्षों की महिमा सुनाते हुए फल फूलों से लदे हुए उस वन में होकर यमुना के तट पर आये। ग्वाल बालों ने गायों को निर्मल जल पिलाया और कुछ काल वहां विश्राम किया। थोड़ी देर के बाद उनसबको बहुत भूख लगी तो वह श्रीकृष्ण बलदेव के पास आकर कहने लगे कि, हे कृष्णजी! हम को बहुत भूख लगी है आप भूख को शांत करने का का कोई उपाय कीजिये। तब बलदेवजी ने कहा कि, हे ग्वाल बालो! वेद के जानने वाले मथुरा वासी ब्राह्मण स्वर्ग की इच्छा से अंगिरस नामक यज्ञ कर रहे हैं तुम वहां जाकर भात मांग लाओ। यदि तुम को भात मांगते लज्जा आती हो तो तुम मेरा नाम ले देना। बलदेव जी की आज्ञा से गोप मथुरा में ब्राह्मणों के पास जाकर कहने लगे कि, हे भूदेवो! हम बलदेव जी के भेजे हुए आपके पास आये हैं। इस समय उनको भोजन की इच्छा है और उनको अधिक भूख लगी है। अतः हे ब्राह्मणो! उनके लिये भात दे दो। वह ब्राह्मण उन ग्वाल-बालों की बात को सुन कर सुनी अनसुनी कर गये। तब वह गोप वहां से निराश होकर लौट आये। तो जगदीश्वर कृष्ण भगवान् ने इन्हें फिर कहा कि हे गोपो! तुम निराश मत होवो। अब की बार तुम उन ब्राह्मणों की स्त्रियों के पास जाओ और कहो कि कृष्ण भगवान् जंगल में ग्वाल बालों सहित भूखे बैठे हैं। यह सुन कर ग्वाल बाल फिर ब्राह्मण पत्नियों के पास गये और उनसे कहा कि, श्रीकृष्ण ने हमको तुम्हारे पास भेजा है। वह गाय चराते २ ग्वाल बालों सहित इस ओर चले आये हैं। उनको और ग्वाल बालों को भूख लगी है। अतः उन्होंने हमको तुम्हारे पास भोजनार्थ भेजा है। इतना सुनते ही ब्राह्मण पत्नियें नाना प्रकार के सुंदर २ भोजन थालों में सजा सजा कर ग्वाल बालों सहित श्रीकृष्ण के पास गई। वहां श्याम स्वरूप पीत वसन धारी, बन-माला पहिरे, मोर पिच्छ का मुकुट शीश पर धरे, श्याम अलकों वाले, मन्द मुसकान वाले श्रीकृष्ण को देख कर परम आनंद को प्राप्त हुई। भगवान् श्रीकृष्ण और ग्वाल बालों ने आनन्द पूर्वक भोजन करके उन ब्राह्मण पत्नियों को विदा किया।

गोवर्धन पूजन।

एक बार नंदजी के घर में इंद्र के यज्ञ की तयारी देख श्रीकृष्ण ने माता यशोदा से पूछा कि, हे माता जी ! आज यह किस बात की तयारी तो रही है। जहां देखो वहीं सारे ब्रज में कढ़ाई खड़क रही है, नाना प्रकार के पकवान बन रहे हैं, और सब जगह बड़ी धूमधाम हो रही है। यशोदा ने कहा पुत्र तुम अपने पिता से पूछो वह तुम को सब वृत्तान्त कहेंगे। श्रीकृष्ण ने नंदजी के पास जाकर कहा कि, हे पिताजी ! आज यह किस देवता का पूजन हो रहा है, इसका क्या फल है ? आपने जो यह यज्ञ का अनुष्ठान किया है वह शास्त्र की रीति से किया है अथवा लोक की रीति से ? यह प्रथा आपके यहां कितने दिनों से चली आरही है ? कृपा करके आप मुझ से सब बात समझा कर कहो। नंदजी बोले, बेटा ! मेघ रूप भगवान इंद्र हैं और मेघ ही उनकी प्यारी मूर्ति है, वही प्राणियों की प्राण रक्षा करने वाले हैं और सन्तोषके देने वाले हैं वही जलकी वर्षा करते हैं। उस मेघपति के वर्षाये जल से उत्पन्न हुए अन्न से हम उसका यजन करते हैं। इस यज्ञ के करने से देवता और पितर प्रसन्न होते हैं, अनेक प्रकार की ऋद्धि सिद्धि मिलती है। बन फूलते हैं, घास उत्पन्न होती है। उससे सब पशु, पक्षी, जीव, जंतु आनंद पाते हैं। हे पुत्र ! यह इंद्र यज्ञ की रीति हमारे यहां परम्परा से चली आई है। जो रीति परम्परा से चली आई है उसको यदि कोई काम, क्रोध अथवा भय से छोड़ देता है तो उस पुरुष का कल्याण हो ही नहीं सकता। नंदराय जी के ऐसे वचन सुनकर श्रीकृष्ण जी बोले:-

कर्मणा जायते जन्तुः कर्मणैव विलीयते।
सुखं दुःखं भयं क्षेमं कर्मणैवाभिपद्यते ॥

हे पिता जी ! कर्म से ही प्राणी जन्म लेता है और कर्म से ही देह का त्याग करता है। सुख, दुःख, भय कल्याण और कुशल यह सब कर्म के ही आधीन हैं। अतः जब कर्म ही प्रधान ठहरा तो इंद्र से क्या प्रयोजन ? सब प्राणी अपने कर्मों के अनुसार भोग भोगते हैं। पूर्वजन्म के संस्कार जन्य जो कर्म हैं उनको इंद्र किसी प्रकार भी नहीं घटा सकता।

देहानुच्चावचाञ्जन्तुः प्राप्योत्सृजति कर्मणा।
शत्रुर्मित्रमुदासीनः कर्मैव गुरुरीश्वरः ॥

यह जीव कर्म से ही छोटे बड़े देह को पाता है और त्यागता है। कर्म ही शत्रु है, कर्म ही मित्र है, कर्म ही गुरु है, कर्म ही ईश्वर है। इसलिये स्वभाव में स्थित होकर अपने कर्मों का अनुष्ठान करना चाहिये। यदि तुम को यह संदेह हो कि बिना देवता के हमारा कार्य सिद्ध नहीं हो सकता तो ठीक नहीं। देखो ! तुम किसी देवता का नाम लेकर अग्नि पर दूध का पात्र रखदो तो वह दूध औट जायगा और यदि देवता का नाम नहीं भी लो तो भी औट जायगा, परन्तु बिना अग्नि पर रक्खे किसी भी प्रकार नहीं औटता इसलिये मुख्य कर्म ही ठहरा। बिना कर्म किये कुछ भी नहीं हो सकता। हे पिता जी ! ऐसा कभी मत समझना कि हमारी गायों की वृद्धि और आजीविका इंद्र के ही आधीन है। क्योंकि सत्वगुण और तमोगुण इनहीं तीन गुणों से विश्व का पालन उत्पत्ति और नाश होता है। इस रजोगुण से स्त्री पुरुष के संयोग से विविध जगत् उत्पन्न होता है। रजो गुण की प्रेरणा से मेघ सर्वत्र सब स्थानों पर जल बर्षाते

हैं। उसी जल से प्रजा का जीवन होता है, इंद्र विचारा इस में क्या कर सकता है ? हे तात ! हमारा तो घर वन ही है। सर्वदा पर्वतों पर ही हमारा वास रहता है। इसलिये उन वनों और पर्वतों का पूजन करना चाहिये जिस से हमारा पालन पोषण होता है। हमारे समीप गोवर्द्धन पर्वत है। आज से उसी के यज्ञ का आरम्भ करदो, जो सामग्री एकत्रित की है उसे गोवर्द्धन के यज्ञ में लगाओ। आज सब व्रजवासी मिल कर गोवर्द्धन पर्वत को बलिदान दो।

श्रीकृष्ण जी की बात को सुनकर सब व्रज वासी एक स्वर से कहने लगे कि कृष्ण सत्य कहते हैं, हमारा इंद्र से क्या प्रयोजन ? हम को नदी, पहाड़ और वन बने रहें। इसके पश्चात् सब व्रजवासी गौओं को आगे करके गोवर्द्धन की परिक्रमा करने लगे। सबों ने धूप, दीप, नैवेद्य और मिष्टान्नों के ढ़ेर के ढेर चढ़ाये सम्पूर्ण पर्वत भोजनों से भर गया। उस समय श्रीकृष्ण ने योग माया से अपना विराट रूप धारण किया। वह वृहत् शरीर, लम्बी लम्बी भुजायें, शैल शिखर बन शीश और जटित मुकुट धारण किये गिरिराज की कंदिरा में से निकल कर बोले "हे व्रज वासियो ! मैं ही गोवर्द्धन पर्वत हूं। मेरी ही पूजा से तुम्हारा भला होगा" यह सुन कर सब व्रजवासी आनंद में मग्न होगये और भोजन के थाल के थाल अर्पण करने लगे। गोवर्द्धन रूप धारी भगवान् कृष्ण प्रसन्न हो हो कर खाते जाते थे। व्रज वासी सब आपस में कहते थे कि "देखो भाई ! गिरिराज ने आज कैसा प्रत्यक्ष रूप से दर्शन दिया ! देखा आपने गिरिराज का अनुग्रह ! क्या कभी इंद्रने भी इस प्रकार प्रसन्न हो कर दर्शन दिया है ?

इसके पश्चात् सब व्रज वासी गोवर्द्धन पर्वत को नमस्कार करके व्रज को लौट आये। इंद्र ने जब देखा कि व्रजवालों ने श्रीकृष्ण के कहने से मेरी पूजा करनी छोड़ दी है और गोवर्द्धन की पूजा करनी आरम्भ की है तो उसने अत्यन्त क्रोध में भर कर प्रलय कारी मेघों को बुला कर कहा "अहो ! बड़े आश्चर्य की बात है कि बन के रहने वाले, गायों के चराने वाले, जाति के ग्वालियों को लक्ष्मी का कैसा मद हुवा है जिन्होंने मनुष्य कृष्ण का आश्रय लेकर मुझ सुराधीश का अपराध करने में कुछ भी आगा पीछा नहीं देखा ! सत्य है मूर्ख को ज्ञान देने से ज्ञान नहीं हो सकता। दृढ़नौका के सदृश, आत्मा का कल्याण करने वाले, इस कर्म यज्ञ को छोड़ जो हठ की तरनी पर बैठ कर इस संसार समुद्र से पार होना चाहता है वह मूर्ख और अज्ञानी है। छोटी अवस्था वाले कृष्ण का आश्रय लेकर इन गंवार ग्वालियों ने संसार में मेरी अवज्ञा की है। इसलिये हे प्रलयकारी मेघो ! तुम उनके गर्व को नष्ट करने के लिये चौरासी कोस व्रज पर ऐसी वर्षा करो कि गोवर्द्धन पहाड़ का नाम मात्र भी न रहे। तुम ऐसी वर्षा करना कि व्रज वासियों का कोई नाम लेवा और पानी देवा भी न रहे। वह चाहे लाख हाय हाय करें परंतु तुम अपने मन में तनिक भी दया मत लाना। उन्होंने मेरे साथ जैसा किया है अपनी उस करणीका फल वह अवश्य भोगें। तुम अपने मन में किसी प्रकार की भी चिंता नहीं करना। मैं भी तुम्हारे पीछे २ ऐरावत पर चढ़ कर ४९ प्रकार की पवनों को साथ लेकर व्रज के चप्पे २ को बहा दूंगा। फिर देखूंगा किस में शक्ति है जो व्रज की रक्षा कर सके"।

इंद्र की इस आज्ञा को सुन कर मेघ चारों ओर से बड़ी द्रुत गति से सारे व्रज पर छागये, बिजली चमकने लगी, भयानक घन गर्जना ने सब के हृदयों को कम्पित कर दिया, वायु भी बड़े वेग से चलने लगी, और ओलों की झड़ी के साथ साथ मूसलाधार वर्षा भी होने लगी। थोड़ी ही देरमें सारा व्रज जल मग्न हो गया। बड़े वेग की वर्षा से और प्रचण्ड पवन से सब पशु थर थर कांपने लगे और सब गोप गोपी भी अत्यन्त दुःखी होकर हाय हाय! करते हुए श्रीकृष्ण की शरण में गये। सबों ने श्री-कृष्ण से जाकर प्रार्थना की 'हे कृष्ण! हे भक्त हित-कारी! हे गोकुल नाथ! महाक्रोधी इंद्र से गोकुल की रक्षा करो"।

आकाश से जब ओलों की शिलायें गिरने लगीं तो भगवान ने जान लिया कि यह काम क्रोधी इंद्र का है। इंद्रने हमारे विनाशके लियेही यह असमय में मूसलाधार वर्षा आरम्भ की है। भगवान् श्रीकृष्ण ने व्रज वासियों से कहा कि 'हे व्रज वासियो! गिरि-राज महाराज ही हमारी सहायता करेंगे अतः सबको उनकी शरण में चलना चाहिये"। श्रीकृष्ण की आज्ञा से सब व्रज वासी गिरिराज की शरण में पहुंचे। वहां पहुंच कर सर्व सामर्थ्यवान् श्रीकृष्ण ने एक हाथ से पर्वत को उखाड़ कर अपने बायें करकी अंगुली पर उठा कर सब व्रज वासियों पर छत्र की भांति तान दिया। तबतो सब व्रजवासी अपने गाय बछड़ों सहित उस पर्वतके नीचे आगये। सात दिन तक अखण्ड वर्षा होती रही। श्रीकृष्ण भी सात दिन तक गिरिराज को एक अंगुली पर उठाये हुए तिल भरभी इधर उधर को नहीं हिले। इस प्रकार व्रज वासियों का उस घोर वर्षा से कुछ भी नहीं बिगड़ा। इंद्र श्रीकृष्ण के योगबल को देख कर चकित हो गया और अपनी प्रतिज्ञा की अवज्ञा देख कर व्याकुल हुआ। उसका सब अभिमान चूर चूर हो गया और मेघों को आज्ञा देदी कि तुम सब लौट जाओ यहां तुम्हारी एक न चलेगी।

इंद्र की आज्ञा से बादल छिन्न भिन्न होगये, सूर्यनारायण उदय हुए, भयानक वर्षा और पवन चलनी बंद हो गई तब श्रीकृष्ण ने व्रज वासियों से कहा कि अब वर्षा और पवन बंद होगई है इसलिये सब पर्वत के नीचे से बाहर चले जाओ। जब सब व्रजवासी पर्वत से दूर हो गये तो श्रीकृष्ण ने पर्वत-राज को जहांका तहां रख दिया। भगवान् श्रीकृष्ण-चंद्र के अतुल प्रभाव को देख कर व्रजवासी नंदराय जी के पास आकर कहने लगे कि 'हे नंदराय जी! इस आपके बालक के बड़े २ अद्भुत चरित्र हैं। इसने सात वर्षकी अवस्थामें इतने बड़े शैल को ऐसे उठा लिया जैसे हाथी कमलको उठा लेता है'। नंदराय जी कहने लगे, हे व्रज वासियो! गर्गाचार्य ने कहा है "यह तुम्हारा पुत्र शोभा, कीर्ति और प्रभाव में नारायण के समान होगा"। इस लिये तुम इसके कर्मों में आश्चर्य न करो। नंदजी के ऐसे वचन सुन कर व्रज वासियों की शंका दूर होगई

इधर देवराज इंद्र घबराये हुए कमल योनि ब्रह्माजी के पास पहुंचे और उनको वहां जाकर सब कथा सुनाई, ब्रह्माजी बोले "हे इंद्र! तैंने बड़ा अपराध किया है। मैं भी पहिले उनके गोप, ग्वाल और बछड़े हर कर अपनी श्वेत डाढ़ी पर धूल डाल चुका हूं। इसलिये तुम्हें शीघ्र श्रीकृष्ण महाराज की शरण में जाकर उन से क्षमा प्रार्थना करनी चाहिये। यह सुन कर इंद्र श्रीकृष्ण जी के

पास आये और उनके चरणों में गिर कर इस प्रकार कहने लगेः-

हे भगवन्! तुम्हारा स्वरूप शुद्ध सत्वगुणी है, शांत है, सर्वज्ञ है। हे प्रभु! तुम धर्म की रक्षा और दुष्टों का मद दूर करने के लिये दण्ड देते हो। आप जगत् के पिता, गुरु और ईश्वर हैं। हे समर्थ! ऐश्वर्य के मद में डूबा हुआ होने के कारण आप के प्रभाव को न जान कर तुम्हारा अपराध करने वाले मूढ़ चित्त मुझ पर क्षमा दृष्टि करो। हे भगवन्! फिर मेरी ऐसी बुद्धि न हो यही मेरी प्रार्थना है।

नमस्तुभ्यं भगवते पुरुषाय महात्मने।
वासुदेवाय कृष्णाय सात्वतां पतये नमः॥

भगवान् महात्मा पुरुष आपके लिये नमस्कार है। शुद्ध अंतःकरण के प्रकाशक, भक्तों के रक्षक, वासुदेव भगवान् श्रीकृष्णचंद्र तुम्हारे अर्थ नमस्कार है

स्वच्छंदोपात्तदेहाय विशुद्धज्ञानमूर्तये।
सर्वस्मै सर्वबीजाय सर्वभूतात्मने नमः॥

अपने भक्तोंके ऊपर दया करनेके लिये देह-धारण करने वाले और शुद्ध ज्ञानमूर्ति स्वरूप, सबके कारण और सब प्राणियों की आत्मा आपको नमस्कार है। हे भगवन्! जब मेरा यज्ञ नाशको प्राप्त हुवा तब बड़ा क्रोधकर मुझ अज्ञानी अभिमानी ने व्रजका नाश करने के लिये वर्षा और पवन चला कर अयोग्य कर्म किया। हे प्रभो! आपने मेरे ऊपर बड़ा अनुग्रह किया है जो आपने मेरा गर्व दूर किया। हे सबकी आत्मा श्रीकृष्ण! अब मैं आपकी शरण हूं। हे प्रभो! मुझे क्षमा करो यही मेरी प्रार्थना है।

जब इंद्र ने इस प्रकार भगवान् की स्तुति की तब श्रीकृष्ण चंद्र ने हंस कर गम्भीर वाणी से कहा, हे इंद्र! तुम देवताओं का राज्य पाकर मदमस्त हो गये थे। तुमने मेरा स्मरण करना ही छोड़ दिया था। ऐश्वर्य और धन को पाकर सब मदान्ध हो जाते हैं। इसलिये तुम्हारा मद दूर करने के लिये यह सारी लीला मुझे करनी पड़ी है। हे इंद्र! तुम जाओ, तुम्हारा कल्याण हो, अहंकार को त्याग कर मेरी आज्ञा का पालन करना और सावधान होकर अपने अधिकार पर दृढ़ रहना। इंद्र तथास्तु कहकर श्रीकृष्ण को प्रणाम करके इंद्रलोक को चला गया।

सम्पूर्ण

"भूमा"

अखिल अमंगलों का आदिकारण।

[ले॰ श्री॰ पं॰ गङ्गाप्रसाद जी अग्निहोत्री, जबलपुर]

अपालनं हंति पशूंश्च राजन् (विदुरः)

इस समय भारत में जिस प्रकार बी. ए, एम. ए. आदि की संख्या बढ़ रही है, वृत्ति हीन पुरुषों की संख्या बढ़रही है, मोटरोंकी संख्या बढ़ रही है उनमें बैठने वालों में मूछों का भार सहन करने की आवश्यकता बढ़ रही है, विधवाओं को पुनः सधवा बना कर भारत का पुनरुद्धार करने का उत्साह बढ़ रहा है, अछूतों को पंक्ति पावन करने की लालसा

बढ़ रही है, चर्खे और खद्दर का प्रचार बढ़ रहा है, उसी प्रकार उन सब के मूलपर बज्राघात करने वाले भारत के अखिल अमंगलों को बढ़ाने वाले गोवध की मात्रा नित उठ बढ़ती जाती है! खेद, संताप और अत्यंत लज्जाकी बात तो यह है कि भारत के सब मंगलों और कल्याणों पर पानी फेरने वाले गोवध को रोक कर नष्ट करने वाले राम बाण उपायों की ओर भारत के नामी ग्रामी नेताओं का बिंदु मात्र भी ध्यान नहीं है। इसका प्रधान कारण यही है कि भारत में चिरकाल से शास्त्रविहित गोपरिपालन की विधि तथा उसकी चर्चा उठ गई है। इस समय गोवध के कारण भारतीय जनता के सात्विक भोज्यान्नों की उपज जिस प्रकार उत्तरोत्तर घटती जाती है और वे जिस प्रकार भयंकर रूपसे महंगे होते जाते हैं, उस ओर भारत के धुरंधर नेताओं का बहुत ही कम ध्यान रहता है। भोज्यान्नों की महंगाई के लिये हमारे नेतागण सरकार को कोसने में अपनी प्रखर बुद्धि का जितना दुरुपयोग करते हैं उतना ही वे उस बुद्धि का उन उपायों के खोजनेमें सदुपयोग करें, जो भारतीय जमींदारों और किसानों के अधिकार में है तो उनकी उस कुशाग्र बुद्धि से भारत का बहुत कुछ हित हो सकता है। पर न जाने उनका ध्यान उन उपायों की खोज की ओर क्यों नहीं जाता। उनका ध्यान न तो उन उपायों की खोज की ओर ही जाता है और न उन उपायों को लोगों में फैलने देता है, जिन्हें सरकार खोज कर निकालती है। सरकार ने पिछले दिनों जिस राजकीय अनुसंधानक दल को राजा पृथु की न्यांई भारतीय कृषि के अभाव और अभियोगों का पता लगाने को नियत किया था उस दलने भारत में चल फिर कर भारत के कृषि विशारदों से विचार विनिमय कर, अपने अनुभव के सहारे जिन उपायों को प्रकट किया है उनकी चारों ओर से निंदा की जारही है, निंदा करने वाले लोगों में अधिक संख्या उन्हीं लोगों की है जिन लोगों ने विश्व विद्यालय के कमरों से बाहर निकलने के पश्चात् संपादकीय गद्दी को छोड़ कर न तो कभी भारतीय खेतों को देखा है और न भारत के प्राचीन कृषि विज्ञान के साहित्य को ही देखा है। उनकी उक्त निंदा अनाधिकार चर्चा होने के कारण लाभप्रद नहीं हो सकती! यह परिस्थिति भारत के ठोस हित के लिये निःसंदेह बहुत हानि कारक है।

अब यहां यह प्रश्न उपस्थित होता है कि वर्तमान भारतीय धुरंधर पंडितों का ध्यान भारतीय जनता के भोज्यान्नों की उपज वृद्धि की ओर क्यों नहीं जाता? इसका कारण ऊपर लिखा ही जा चुका है कि प्राचीन भारतके व्यास बसिष्ठ और नारदादि भारत हितैषी विद्वान् जिस प्रकार अपने समकालीन राजा महाराजाओं तथा सेठ साहूकारों की सभाओं में उपस्थित होने पर उनका ध्यान भारतोन्नति की अन्यान्य बातों की ओर आकृष्ट करते रहते थे, उसी प्रकार वे भारत की कृषि और उसके प्रधान सहायक गोधन के परिपालन विधि की ओर भी आकृष्ट करते थे! भारतीय विद्वानों की यह उपदेश प्रद प्रथा चिरकाल से मिटते २ अब यहां तक मिट गई है कि इस समय के साक्षर और सधन भारतीय किसानों की उन्नति और गोधन के सुधार संबंधी अपने दायित्व को सर्व्वथा भूल गये हैं! वे उससे अपरिचित होकर दूर जा पड़े हैं सारांशवर्ति कर्म्म में जहां तहां फूट फैल गई है। धनवान कपड़े और

सूत की मिल के मालिक तो बनते जाते हैं पर बढ़िया कपास पैदा करने की ओर बिंदु मात्र भी ध्यान नहीं देते। इसका परिणाम यह हुआ है कि अब भारत में वह कपास ही पैदा नहीं होती जिससे प्रचीन समय में ढाके की मलमल बनाई जाती थी। समभःदार भारतीय विद्वानों और धनवानों के लिये यह कम लज्जा की बात नहीं है। पर किसी का तिल मात्र भी ध्यान उधर नहीं जाता।

भारतीय साक्षर सधन और साधिकार लोगों की यदि यह हार्दिक इच्छा है कि उनके द्वारा भारत के पुनरुद्धार का मार्ग सुगम और निष्कंटक किया जाय, तो उन्हें अपने अन्यान्य कामों के साथ ही साथ भारतीय नागरिक जनता में गोपरिपालन की सशास्त्र विधि का ज्ञान फैलाने के लिये यथेष्ट चेष्टा करनी चाहिये। हमारे नेताओं का यह कहना अनुचित और भ्रामक है कि हमारे किसान किसानी और गोपरिपालन के पारगामी पंडित हैं, पर बपुरे करें क्या! दरिद्रता के कारण कुछ नहीं कर सकते। सभी भारतीय जमींदार और किसान दरिद्र नहीं हैं। जो जमींदार और किसान नाना प्रकार की कौनसिलों में जाकर अजागल प्राप्त करने में पानी की नाई धन बहाते हैं वे वस्तु स्थिति को पहचान लेवें तो अपने धन का, अपनी जमींदारी और अपने गोधन के सुधार में भी सदुपयोग कर सकते हैं। पर वे वैसा नहीं करते। इसका कारण यही है कि वे इस बात को सर्वथा भूल गये हैं कि अपनी जमींदारी और गोधन का समयानुमोदित सुधार करना हमारा ही कर्तव्य कर्म्म है। अपनी कम समझ और नेताओं की उलटी मंत्रणाओं के कारण वे अपने धन को अपनी उत्पादक वस्तु के सुधार में न लगाकर अनुत्पादक वस्तुओं की प्राप्ति में लगाते जाते हैं। देशके नेताओं को भारत के धनवानों का ध्यान गोवध को रोकने वाले स्वायत्त उपायों की ओर-गोपरिपालन की शिक्षा के प्रचार की ओर आकृष्ट कर भारत के अखिल अमंगलों का कारण जो गोवध है उसको रोकना चाहिये। यह उपाय सर्वथा उनके आधीन है। आधीन उपाय की उपेक्षा कर पराधीन उपाय के लिये रोना बुद्धिमानी नहीं है। डिस्ट्रिक्टबोर्डों को इस ओर विशेष ध्यान देना चाहिये।

पश्चात्ताप।

[ले० श्री० आनन्द भिक्षु सरस्वती।]

हाय ! यह कैसा अनर्थ ? क्या मेरी दृष्टि मुझे धोखा दे रही है ? मैं जागता हूं या स्वप्न देखरहा हूं। आखिर यह है क्या ? उसे तो मैं मार्ग में ही छोड़ आया था। वह मन्दिर के बरामदे तक तो पांव रख ही नहीं सकता, फिर यहां भगवन के पवित्र सिंहासन पर है ! क्या बात है ? लो, वह तो लोप ही होगया। वह मूर्ति अन्तर्धान हो गई। इसी सोच विचार में मैं उसका भली प्रकार दर्शन भी न कर सका। हा! मैं छला गया, धोखा खा गया। भगवान ने मुझे दर्शन दिए थे, पर मैं अभागा उन्हें पहचान भी न सका। हा!

× × × × ×

मनुष्य अपनेको तो बड़ा चतुर और बुद्धिमान् समझता है, परन्तु हाय ! वह कितना तुच्छ और विवश प्राणी है । हम एक दूसरे के साथ रहते सहते उठते, बैठते, खाते, पीते तो हैं परन्तु यथेष्ट रूप से किसीको जानते पहिचानते नहीं, और न उसके लिए कुछ वास्तविक यत्न ही करते हैं, परन्तु हां पीछे उस के न रहने पर रोते और बेतरह सिर धुनते अवश्य हैं ।

इसी जमुना तट पर गऊएं चराने वाले, गायों के घरमें ऊधम मचाने वाले और बांसुरी बजा कर समस्त बृज मंडलको मुग्ध करने वाले श्रीकृष्णको उन के जीवन कालमें कितने आदमियों ने पहिचाना था ? वेदों के परम उद्धारक शंकर स्वामी को किस ने विष दिया था ? उनके साथियों ने । हा ! मनुष्य की दृष्टि बड़ी ही संकुचित है । यह अपने ही स्वार्थ तक परमित रह कर अनेक अनर्थ उत्पन्न करती है । मनुष्य अपने कलुषित हृदय एवं दूषित विकारों के कारण किसी को जानने पहिचानने का यत्न नहीं करता और अपने ही राग-रङ्ग, ईर्षा, द्वेष, मान अपमान में मस्त रहता है । उसे नीच, ऊंच, अमीर, गरीब, जात पात, अपना पराया इत्यादि अनेक छोटी बड़ी स्वार्थ युक्त दुर्भावनाएं तथा कुवासनायें घेरे रहती हैं और यह उनके वशीभूत होकर जीवन के सूक्ष्म तत्वों को ठीक २ पहिचान ही नहीं सकता, वल्कि इस के विपरीति कभी २ महापुरुषों का तिरस्कार व निरादर ही कर बैठता है हाय! आज मुझ से भी वही भयंकर भूल हुई ।

अरे ! मैंने क्या किया । मैं ने उसे "दूर हट, दूर हट" के अपमान जनक शब्दों से क्यों हटा दिया ? मैं नहा धो कर पूजा करने के लिए अवश्य आ रहा था, पर क्या उस के छूजाने से उसकी परछाईंसे मैं अपवित्र होजाता ? और यदि हो भी जाता तो क्या था । फिर लौट कर यमुना में स्नान कर लेता । मुझे इस प्रकार उसे दुत्कारना उचित न था । अबोध बालक का हृदय कोमल होता है । हाय ! गरीब दुबक कर बुरी तरह सहम कर रह गया था । उस का कोमल हृदय दहल गया । हाय ! मैंने बड़ा पाप किया । बालक तो साक्षात् ईश्वर के स्वरूप ही होते हैं । उस दिन वह महात्मा जी यही तो कह रहे थे । "ईश्वर का दर्शन करना हो, तो दीन दुःखियों, अनाथ असहायों, कोढ़ी, अपाहिजों, तथा रोगियों और भिखारियों के निकट जाओ, अबोध बालकों के निकट बैठो । भगवान् दीनानाथ ऐसे ही स्थान पर रहते हैं और वहीं अपने भक्तों एवं अधिकारियों को दर्शन देकर कृतार्थ करते हैं । जाओ और प्रभु दर्शन से अपना जन्म सफल करो । पर हां, देखना वहां तुम्हें दीनों के दीन, और दासानुदास हो कर जाना होगा, प्रेम और श्रद्धा के साथ जाना होगा, अपने हृदय को शुद्ध एवं भक्ति-भाव से परिपूर्ण करके जाना होगा । वहां किसी प्रकार की अहम्मन्यता का प्रवेश नहीं और न हीं वहां एहसान जाननेका काम है

हाय ! मैं इस भूल के लिए क्या करूं ? अब यह पश्चात्ताप तो मुझे जीवन भर के लिए होयगा । भगवान् अछूत बालक के रूप में मुझ से मिलने के लिए मार्गमें खड़े थे । परन्तु मैंने अपनी पवित्रता और उच्चता के झूठे आडम्बर के फेर में पड़ कर उनका तिरस्कार किया । हा ! मुझे अब तक के जीवन में एक ही तो अवसर मिला था । परन्तु उसे भी मैंने अपनी अल्पज्ञता एवं अहम्मन्यआ से व्यर्थ ही खो दिया । मुझे पारस मणि मिली थी, पर मैंने उसे

कांच समझ कर फेंक दिया, गंवा दिया। जिस के द्वारका मैं भिखारी था, वह तो न जाने मेरे किस प्रेम-मय व्यवहार से प्रसन्न हो कर स्वयं मुझे दर्शन देकर कृतार्थ करने के लिए मेरे द्वार पर आए थे ? और मैंने उन्हें दुत्कार दिया। क्या मेरे समान कोई और भी मूर्ख पातकी, और अभागा हो सकता है ? पर अब क्या करूं ? मेरी बिगड़ी कैसे बनेगी ? क्या इस अपराध के लिए मुझे प्रायश्चित्त स्वरूप आजीवन पश्चात्ताप की अग्नि में जलना होगा ?

जिसके मन्दिर का मैं पुजारी था, जिसकी सेवा टहल करते २ मेरी इतनी आयु व्यतीत होगई और जिस के भोग और प्रसाद से मेरा और मेरे समस्त परिवार का पोषण हुआ और होता है, जिस की पूजा और सेवा से ही मेरी इतनी प्रतिष्ठा व ख्याति होगई है और जिस के दर्शनों को बड़े २ योगी, यति, साधु, महात्मा लालायित रहते हैं, जिसे मुझे बड़े प्रेम और भक्ति के साथ अपनी छाती से लगाना था, जिसे उठा कर बड़े गौरव और सत्कार से मस्तक पर बिठाना था, जिस के गुणानुवाद में मुझे बड़े प्रेम से सुमधुर भाषा में स्तुति प्रार्थना करनी थी, उसी के साथ मेरा यह कठोर व्यवहार हुआ। पर हा ! मनुष्य स्वभाव का यह अनर्थकारी पतन !!!

ऋषियों के आश्रम

१० वें अंक से आगे।

(ले० श्री० जयराम "सनातन" दिल्ली)

भारत वर्ष ने अपने आदर्श को भुला दिया। उन्नति के लिये अनेक नवीन संस्थाओं को जन्म देते हुवे अपने आर्य जातीय जीवन तत्त्व को नहीं पहिचाना। शिक्षा या उन्नति सम्बन्धी किसी भी संस्था का आश्रम जैसी महान दिव्य और सार्वभौम संस्था से मुकाबला करना भारी भूल है रात्रि में एक अन्धेरे कमरे के अंधकार को दूर करने वाले एक तुच्छ दीपक का समस्त विश्व को प्रकाश देने वाले ज्योतिर्मय सूर्य से मुकाबला करने की न्याई है। भारतवर्ष को आवश्यकता है आश्रमों की। महात्माओं की अब भी कमी नहीं नेताओं की कमी नहीं, आवश्यकता है हिन्दुओं को पक्के चेले बनने की, आवश्यकता है जम कर काम करने वालों की। हिमालय की कन्दिराओं से महात्माओं, योगियों और ऋषियों द्वारा सब आवश्यकता पूर्ण हो सकती हैं, परन्तु उनके लिये स्थान तो हो। जो ऋषि यहां विद्यमान हैं वह भी अनुकूल जल वायु और स्थानाभाव के कारण पुनः कन्दिराओं में जानेका विचार करते हैं।

अनादि काल से स्वामी शंकराचार्य जी के समय तक आश्रमों की बाहुल्यता थी। बौद्ध काल में भी इन का खूब प्रचार था और आश्रम विहार कहलाते थे। बुद्ध विहार अभी तक चीन, तिब्बत मंगोलिया, मनचोरिया, तुरकिस्तान, जापान आदि

देशों में बहुत पाये जाते हैं। मध्य एशिया (आर्य जाति का मुख्य आदि निवास स्थान) तथा मानसरोवर, कैलाश और सुमेरु पर्वत अभी तक आश्रमों के बड़े केन्द्र हैं। स्वामी शंकराचार्य द्वारा स्थापित आश्रम रूपी चारों मठों का भी राजा प्रजा सब पर धार्मिक शासन रहा करता था। उनके धर्मोपदेश कल्पद्रुम की छाया में देश और जाति सर्वसुख सम्पन्न तथा उन्नत थे। बाल काल और विद्यार्थी काल में ही सब के चित्त में धर्म प्रेम, वीरता, साहस, परोपकार आदि का बीज बोया जाता था। ब्राह्मण सच्चे ब्राह्मण क्षत्रिय सच्चे क्षत्रिय, और वैश्य सच्चे वैश्य बनते थे। आश्रमों की शीतल छाया में द्विज मात्र वेदपारगामी बन कर प्रवृत्ति मार्ग में आदर्श जीवन व्यतीत करते थे और निवृत्ति मार्ग में साधु संत महात्मा ऋषि गणों के द्वारा ही संसार में चिरस्थायी त्याग, परोपकार, भक्ति, निष्काम जाति और देश सेवा का उन्नतिकारी आदर्श स्थापित होता था।

मनुस्मृति में लिखा है:-

एतद्देश प्रसूतस्य सकाशादग्र जन्मनः।
स्वं स्वं चरित्रं शिक्षेरन पृथिव्यां सर्व मानवाः

वास्तव में अग्रजन्मा ब्राह्मण संसार के आचार्य शिक्षक प्रचारक और भूसुर अर्थात् भूलोक में देवता थे। उनको शिक्षा का प्रबन्ध था, उनको वस्त्र भोजन की चिंता नहीं थी, राजा और प्रजा उन पर प्राण न्योछावर कर देने के लिये सर्वदा तयार थे। गो ब्राह्मण प्रतिपालक राजाओं का एक विशेष गुण था। तन मन धन से उन ब्राह्मणों, ऋषियों और आश्रमों की सेवा में तत्पर थे। उनका उचित सम्मान था। वशिष्ट ऋषि का आसन राज सभा में मर्यादा पुरुषोत्तम श्रीरामचंद्र जी के राज सिंहासन से ऊंचा था। तब ये प्राचीन भारत उन्नति के शिखर पर था, यह सब आश्रमों की लीला थी। यह सब उन स्वनामधन्य तल्लीन भगवद्भक्त ऋषियों के प्रकाश से था।

प्यारे भारत! यदि सच्चा भारत बनना है, यदि आर्य जीवन का, सर्व सुख सम्पन्न जीवन का-दोनों लोकों में काम आने वाले जीवन का आनन्द लेना है, यदि शिक्षा पद्धति, गोरक्षा, ब्रह्मचर्य आदि विकट समस्याओं को हल करना है, यदि आर्य जाति को उन्नति के शिखर पर ले जाना है, यदि आर्य सभ्यता को जीवित रखना है यदि इस देश को पुनः संसार का गुरु और आचार्य बनाना है, और यदि आर्य जीवन का यहां के नर नारियों की रगों में पुनः संचार करना है तो जीवित कर फिर से आश्रम प्रणाली को, आश्रय प्राप्त कर फिर उन ऋषियों का जो तेरे भाग्य से मरुस्थल जैसे देश में आ पधारे हैं।

अवतार हो।

(ले० मुरारी शर्मा 'अभय')

भगवान् भारतवर्ष में, फिर आपका अवतार हो।
देव गण मङ्गल करें, भक्तों को हर्षापार हो॥
दूर हों पाखण्ड सारे, औ चूर अत्याचार हों।
भरपूर हों तव भक्ति से, सुख शान्ति का सञ्चार हो॥
घोर सङ्कट में पड़े हैं, दीन जन प्रभु आपके।
हो कृपा अब नाथ ऐसी, हम दीनों का उद्धार हो॥
दो अभय का दान प्रभु वर, हों 'अभय' सेवक तेरे।
चहुं ओर भारत दर्ष में, तव भक्ति का परचार हो॥

श्रद्धा ।

गतांक से आगे ।

(ले० श्री० सूरज देवी भगवद्भक्ति आश्रम)

श्रद्धां प्रातर्हवामहे श्रद्धां मध्यन्दिनं परि ।
श्रद्धा सूर्यस्य निम्रुचि श्रद्धे श्रद्धा पयेह नः ॥

यह वेद का मंत्र है इसमें श्रद्धा की प्राप्ति के लिये प्रार्थना की गई है हम प्रातः उठते ही श्रद्धा देवीका आह्वान करते हैं दिन भर में श्रद्धा माता का आह्वान करते हैं और सूर्य के निम्न कालमें भी श्रद्धादेवी को बुलाते हैं। हे देवि श्रद्धे ! हमें इस जीवन में अपने से–श्रद्धा से भर दे। पूर्व प्रकरण में आचुका है कि भगवत्प्राप्ति श्रद्धालु जनों को होती है, श्रद्धाके आधीन ही दान, तप, धर्म हैं। जो मनुष्य श्रेष्ठ सत्वगुण युक्त श्रद्धा वाला है उस के लिये कुछ भी अगम्य नहीं है। दान धर्म तप सब इसके अन्तरगत आजाते हैं। महाभारत में लिखा है।

किं तस्य तपसा कार्यं,
किं वृत्तेन किमात्मना ।

श्रद्धावान् पुरुष को तप सदाचारादि से क्या प्रयोजन ? श्रद्धा के सहारे सम्पूर्ण गुणों का, समावेश हो जाता है। वेद, शास्त्र, गीता और महाभारत में श्रद्धा का उपदेश दिया है। क्योंकि श्रद्धा बिना तो उपदेश भी फलदायक नहीं होता है। जिस मनुष्य की जितनी ही दृढ़तम श्रद्धा होगी वह उतना ही अपने उद्देश्य को सफल करने में शक्तिमान् होगा। यह विषय जितना ही गंभीर तथा कठिन है उतना ही सरल भी है क्योंकि समस्त भूमंडल के प्राणियों के सांसारिक व्यापार इसी से सिद्ध होते हैं। ऋषि मुनि नित्य श्रद्धा के लिये भगवान् की स्तुति किया करते थे। वेद में लिखा है कि:-

श्रद्धयाग्निः समिध्यते श्रद्धया हूयते हविः

श्रद्धासे ही जीवन तेज चैतन्य होता है, श्रद्धा से ही जीवन रूपी यज्ञ में आहुति दी जाती है। अश्रद्धापरम पाप है श्रद्धा पाप बन्धनों से मुक्त करती है। श्रद्धा जीवन का जीवन है, मनुष्य का मनुष्यत्व है, श्रद्धा रहित मनुष्य अपने उद्देश्यों से विफल हुवा पंचत्व को प्राप्त हुये के समान है, और उसको इस नश्वर जीवन में कभी शांति नहीं प्राप्ति होती है। शांति रहित को आनन्द कहां ? भगवान् श्रीमद्भगवत् गीता में कहते हैं।

अशान्तस्य कुतः सुखम् ।

आनन्द–सुख से रहित जीवन व्यर्थ है। श्रद्धा के बिना भजन, भक्ति, दान, तप असत् कहे हैं। जो भी कर्म श्रद्धा युक्त होकर किये हैं, या हो रहे हैं या किये जावेंगे वे ही सफल होते हैं। ज्ञान प्राप्ति भी उपदेशक के वचन पर श्रद्धा रखने से होती है श्रद्धा की महिमा से अनभिज्ञ मनुष्य श्रद्धालु मनुष्य को अंध-विश्वासी, बुद्धि रहित भी कह देते हैं क्योंकि उनका हृदय अनेक संशयों से घिरा हुवा होता है। अतः वह पवित्र श्रद्धा की गहरी तह को नहीं पाकर दूसरों के प्रति तुच्छ विचार प्रकट करते हैं, श्रद्धा, भक्ति ज्ञान, तथा ईश्वर के स्वरूप का वे ही आदर करते हैं

जिनके हृदय में सत्संग, ईश्वर तथा श्रीगुरु की अनुकम्पा से इन विषयों का अंकुर उगा है। अन्यथा कभी २ वे हास्य के पात्र भी हो जाते हैं। परन्तु ईश्वर श्रद्धालु मनुष्य पर अति शीघ्र प्रसन्न होकर दर्शन देते हैं तथा कृतार्थ कर देते हैं।

एक बार दो मनुष्यों ने भगवन् दर्शन की उत्कण्ठा से भगवान् का भजन करना आरम्भ किया उन में एक श्रद्धालु और एक सन्दिग्ध चित्त वाला था। दोनों गहन वन में चले गये और एक मनुष्य अश्वत्थ वृक्ष के नीचे, और एक इमली के वृक्ष के नीचे बैठ गया। दोनों में कितनी श्रद्धा है यह देखने के लिये भगवान् ने नारदजी को वहां भेजा। नारद जी भ्रमण करते २ उन भक्तों के पास आये। वे दोनों एक दूसरे से कुछ अन्तर पर बैठे थे। पहिले नारद जी अश्वत्थ वाले भक्त के पास आये। भक्त ने उठ कर उनका स्वागत किया और नम्रता पूर्वक पूछा कि आप कौन हैं कहां से पधारे हैं? नारदजी ने कहा, कि मैं नारद हूं भगवान् के पास जाऊंगा, तब तो भक्त ने कहा कि हे देवर्षिजी! आप श्रीभगवान् से पूछना हमें कब दर्शन होंगे। नारद जी ने तथास्तु कह कर इमली वाले भक्त को दर्शन दिये। उसने भी भली भांति यथा शक्ति आतिथ्य सत्कार किया और नम्रता पूर्वक वही प्रश्न किया। तब नारद जी ने कहा कि, मैं नारद हूं और श्री-भगवान् के पास जाऊंगा। यह सुन कर उस भक्त ने भी वही प्रार्थना कह सुनाई कि, श्री भगवान से पूछना हमें कब दर्शन होंगे। नारद जी अच्छा कहकर वीणा बजाते हरि रंग में रंगे हुये, हरि गुण गान करते, भक्तों के प्रश्न का क्या उत्तर मिलेगा इस उत्कंठा से भरे हुये श्रीनारायण के पास पहुंचे। बैकुण्ठ में वीणा की ध्वनि को पहिचान भगवान् ने जाना कि नारद जी आरहे हैं कोई न कोई नूतन समाचार लाये होंगे। इतने ही में नारदजी भी आगये और प्रणाम करके बैठ गये। भगवान् ने कहा कहिये नारद जी भ्रमण का हाल! बताइए क्या २ समाचार लाये हैं? नारद जी तो कहना चाहते ही थे। भगवान् ने स्वयं ही पूछ लिया फिर क्या था प्रश्न होते ही कहने लगे, महाराज! आपके भक्तों के दर्शन किये उन्होंने एक प्रश्न आपसे पूछने को कहा है। श्री भगवान् ने कहा, कहिये नारद जी क्या पूछना है? नारद जी ने कहा हे महाराज! दो भक्त तप-स्या करते हैं एक अश्वत्थ के वृक्ष के नीचे और एक इमली के वृक्ष के नीचे। दोनों ने पूछा है कि भगवान् से पूछना हमको कब दर्शन होंगे? सो आप कृपया बतलाइये मैं उन से जाकर क्या कहूं। भगवान् ने कहा कह देना पीपल वाले को पीपल के जितने पत्ते हैं उतने जन्मों में और इमली वाले को इमली के जितने पत्ते हैं उतने जन्मों में मिलूंगा। नारद जी सुनकर मुस्कराये और मन में कहा अच्छा उत्तर मिला! इतने जन्मों में तो वे मेरे कथन को भूल ही जावेंगे! अच्छा देखूं तो सही वे क्या उत्तर देंगे! ऐसा विचार कर नारद जी भक्तों के पास चले। इधर की बात उधर कहना उधर की इधर कहना यह तो उन का जन्मसिद्ध अधिकार है फिर भला वे ऐसा सुअ-वसर क्यों चूकते! वीणा की ध्वनि में मस्त हुये तत्काल भक्तों के पास जा धमके और पहिले पीपल वाले भक्त को दर्शन दिये। भक्त ने पूछा ऋषिराज! क्या उत्तर लाये हैं? नारद जी ने कहा पीपल के जितने पत्ते हैं उतने जन्मों में मिलने के लिये भग-वान् ने कह दिया है। यह सुनते ही वह अश्रद्धालु कहने लगा, ओ हो! इतने जन्मों में मिलेंगे! फिर क्या

निश्चय कि वे अवश्य ही मिलेंगे ! मिलें वा न मिलें क्यों शरीर को जर्जरीभूत किया ! जिस बात का निश्चय ही नहीं उस बात पर अपने दुनियां के कार्य भी क्यों छोड़े ! ऐसा विचार कर वह तो अपने घर को चल दिया । नारद जी यह लीला देख दूसरे भक्त के पास आये उसने भी पूछा कि हे महाराज ! भगवान् ने क्या कहा है ? नारदजी ने कहा कि, भगवान् ने कहा है इमली में जितने पत्ते हैं उतने जन्मों में मिलूंगा। वह भक्त श्रद्धालु था, निश्चयात्मक था, उसे निश्चय होगया कि भगवान् अवश्य मिलेंगे चाहे जितने भी जन्मों में मिलें । ऐसा सोच वह प्रेम में मग्न होगया और आखों में आंसू भरकर नाचने कूदने लगा और कहने लगा कि मिलेगें भगवान् मुझ दीन को अवश्य मिलेगें । मेरे ऊपर भगवान् ने अति दया की जो इतने जन्मों में मिल जांयगे। वह भक्त इतना विश्वास और प्रेम में रंग गया कि उसे अपने तन मन की सुधि ही नहीं रही । ऐसी अवस्था भक्त की होने पर भगवान् से वैकुण्ठमें कैसे रहा जाता है । वह तो प्रेम और विश्वास के ही भूखे हैं तत्काल यह कहते हुये कि-"मैं तो हूं विश्वास में" प्रकट होगये । भक्त ने दर्शन किये, और स्तुति, की चरणोंमें प्रणाम कर आनन्द में विह्वल होगया । भगवान् ने कहा कि हे भक्त ! तेरा विश्वास, प्रेम दृढ़ था अतः तुझे देखने के लिये मैं तत्काल दौड़ा आया हूं । तू भजन करता हुआ मेरे पद को पहुंचेगा ऐसा कह भगवान् अर्न्तध्यान हो गये । वह भक्त भी भगवान् की उसी मनोहर मूर्ति का ध्यान करता हुआ भजन करता हुआ परम पद को प्राप्त हो गया । इस दृष्टान्त से विदित हुआ कि श्रद्धा कितनी उपयोगी है ।

महाभारतमें लिखा है कि एक बार नारदजी ने भगवान् से कहा कि आप पाण्डवों से जितना प्रेम रखते हैं उतना कौरवों से नहीं रखते हैं । श्रीकृष्ण ने कहा हे नारदजी! पांडवों की मेरे ऊपर अत्यन्त श्रद्धा है कौरवों की नहीं । बस इतना ही मेरे प्रेम में अन्तर है । यदि इसमें आपको कुछ शंका हो तो परीक्षा कर लीजिये आज ही आप जाइये कौरव, पांडवों से पृथक् २ कहना कि आज श्रीकृष्ण ने सुई के नाके मेंसे हस्ति निकाला है । तब आपको विदित हो जायगा कि किसकी कितनी श्रद्धा है । नारदजी प्रसन्न होते हुये चले और पहिले दुर्योधन के पास पहुंचे । दुर्योधन ने नारदजी को देखते ही आसन से उठ कर अर्घ्य धूप दीप से पूजन सत्कार करके आसन पर बैठाया। और कहा कि सुनाइये ऋषिराज श्रीकृष्ण तो अच्छी तरह से हैं । नारदजी ने कहा-अच्छी तरह से हैं, परन्तु आज हम जब गये तो क्या देखा कि श्रीकृष्ण ने सूई के नाके में से हस्ति निकाल दिया ! यह सुनते ही दुर्योधन अविश्वासी हंसा और कहा कि हे ऋषिराज ! आज तक तो मनुष्य ही झूंठ बोलते हैं यह सुना करते थे परन्तु अब देखा कि देवता भी असत्य भाषण से प्रेम रखते हैं और उनमें भी देवर्षि नारद जी ! हे नारदजी ! कहीं सूई के नाके में से हस्ति निकल सक्ता है ! इतनी झूंठ ! इस बात को तो मूर्ख मनुष्य भी नहीं मान सकता ! फिर भला मैं कैसे विश्वास कर सक्ता हूं ! आपके विषय में जो कहते हैं कि नारदजी चिड़ी लड़ावे की भांति एक दूसरे के सामने गप शप झूंठ सच कहते फिरते हैं सो तो आज सत्य ही जान पड़ा । यह बात सुनकर नारदजी समझ गये कि पूरा भौंदू बसन्त और अविश्वासी है । भला भगवान् का प्रेम इस पर कैसे हो सक्ता है ! कुछ देर बैठ कर वहां से चलदिये और

युधिष्ठिर के दर्बार में आये, युधिष्ठिर ने भी भली प्रकार आदर सत्कार करके उत्तमासन पर बैठाया। तब युधिष्ठिर कहने लगे कि-हे नारदजी! श्रीकृष्ण तो अच्छी तरह से हैं! नारदजी ने कहा हां अच्छी प्रकार हैं परन्तु आज हमने एक आश्चर्य कारक घटना देखी श्रीकृष्ण ने सूई के नाके में से हस्ति को निकाल दिया! देखो! बड़ाही आश्चर्यका कर्मकिया! युधिष्ठिर ने कहा हे ऋषिराज! इसमें आश्चर्य ही क्या है! यदि भगवान् श्रीकृष्ण सूई के नाके में से ब्रह्माण्ड को भी निकाल दें तो भी कोई आश्चर्य नहीं! श्रीकृष्ण तो हे नारदजी! समर्थ और सर्वशक्तिमान हैं। आपको आश्चर्य कैसे हुआ? आप देवर्षि होकर भी यदि श्रीकृष्ण भगवान् की शक्ति महिमा पर आश्चर्य करते हैं तो इससे अधिक क्या आश्चर्य होगा! वे तो सुई के नाके से क्या उसके शतांश में से भी करोड़ों ब्रह्मांडोंको निकाल सकते हैं। नारदजी यह सुनकर प्रेममें गद् २ होगये और समझ गये कि ऐसे निश्चल श्रद्धान्वित भक्तवर श्रीकृष्णका प्रेम क्यों न हो। श्रद्धा के विषयमें अनेक दृष्टान्त हैं जिनसे प्रतीत होता है कि श्रद्धा सांसारिक तथा पारमार्थिक कार्योंमें आवश्यकीय है। सांसारिक कार्य नश्वर हैं अत: इन कर्मों की श्रद्धा भी नश्वर है। पारमार्थिक कार्य शाश्वत होते हैं अत: इनकी श्रद्धा भी ऐसी ही होनी चाहिये। अधिक क्या भगवान ही श्रद्धा रूप है। यदि श्रद्धा नहीं तो प्रत्यक्ष ईश्वर भी ईश्वर नहीं। अत: श्रद्धा अत्यावश्यक है। पाठक गण! समझ गयेहोंगे कि श्रद्धाको ही शुभ कर्मों की सफलता का श्रेय प्राप्त है।

विशेषांक

रजोगुण और तमोगुण की प्रबल धारा से प्रभावित वर्तमान जगत् में भक्ति का अदृष्ट हो जाना स्वाभाविक बात थी। उग्र कर्म्म करने वाले तपस्वी लोगों ने माया की सूक्ष्म शक्तियों को ध्यान और विचार योग द्वारा खोज करके प्रदर्शित किया और शरीर, मन और बुद्धि के पुरुषार्थ से ऐसे जगत् की रचना कर दी कि जिसमें मन लुभायमान और बुद्धि चकितहोगई। इस सकाम कर्म्म की सृष्टि में करतार की तरफ से दृष्टि ओझल होकर मन, बुद्धि और शरीरधारी जीव पर जा लगी। जिसने जो तमाशा दिखाया वही उसका कर्ता माना गया। वह खोज करने वाले तो उस कारण की खोज में बराबर लगे हुए हैं और प्रत्येक नवीन खोज उनके आश्चर्य में वृद्धि करती है परन्तु तमाशाइयों को तमाशा देखने के पीछे नवीन तमाशे को चाह होती है। एक के बाद दूसरा अद्भुत तमाशा आता है परन्तु थोड़ी देर के बाद वह नीरस प्रतीत होने लगता है। कारण स्पष्ट है वह खेल बुद्धियोग, द्वारा प्रकृति से उत्पन्न हुआ है। उसमें रसिक का दिया हुआ थोड़ा सा रस है। फल यह है कि वर्तमान जगत् ऊपर से सुन्दर होते हुए भी वास्तविक सुख शान्ति और आनन्द से शून्य प्राय: हो रहा है। ऐसी अवस्था में भक्ति का प्रादुर्भाव भी आवश्यक और स्वाभाविक है। वह भक्ति मानसिक सृष्टि से निकल कर दृष्टि

गोचर होने लगी है। परन्तु अभी केवल अंकुर की भान्ति और धीरे २ विकसित होती दिखाई देती है। स्थूल जगत् में उसका विकाश इस समय चाहे कितना ही कम दृष्टि गोचर हो परन्तु वास्तव में उसका वेग बड़ा प्रबल है और वह जल्दी ही स्थूल रूप में भी विकसित दिखाई देगी। कारण भक्तों की भावना बड़ी प्रबल होती है चाहे उनकी संख्या कितनी भी कम हो। शक्ति तो भक्ति के साथ २ आप ही आजाती है। भक्ति के संचालक और पाठक जो वास्तव में एक ही हैं और भूल से बाह्य काम की देख भाल के कारण अपने को पृथक् समझते हैं भक्ति को सुन्दर और स्थूल देखना चाहते हैं। भगवान भी हमारी भावनाओं के अनुसार उसका रूप वैसा ही बनवा रहे हैं। दो भक्तों के प्रयत्न से मैशीन का प्रश्न हल हो जाने से छपाई में उन्नति हो चली है। भक्ति के ११वें अंकमें ब्रह्मचारी भूमानन्दजी ने जो इसके वास्तविक सम्पादक हैं भक्ति के परिवार को विशेषांक निकालने की सूचना दी है। वह विशेषांक कैसा होगा इसको ठीक २ तो भगवान् ही जानते हैं परन्तु उसके लिए जो प्रयत्न हो रहा है उसके आधार पर कहा जा सकता है कि, भक्ति की अपनी वर्तमान अवस्था में वह अंक अच्छा होगा। उसमें रंगीन और सादे दोनों भान्ति के चित्र होंगे और देश के बड़े २ विद्वान, भक्त लोग, और साधु महात्मा नेताओं के लेख होंगे। इस कार्य में भगवान् की तो पूर्ण दया की आवश्यकता है ही, परन्तु लेखक, सहायक ग्राहक और संचालक गण अपने२ तन, मन और धन से जितना पुरुषार्थ कर सकेंगे हम भक्ति का रूप भी उतना ही सुन्दर और स्थूल बना सकेंगे। गतांक में यह सूचना दी गई थी कि भक्ति का भगवद्भक्तांक ८० पृष्ठ का होगा और उसका मूल्य ॥=) होगा परन्तु अब निश्चय किया है कि अंक १०० पृष्ठ का होगा और मूल्य केवल ॥) होगा। स्थाई ग्राहकों को उसी मूल्य पर मिलेगा। भक्ति की ग्राहक संख्या बहुत कम है और उसमें भी ऐसे प्रेमी पाठकों की संख्या अति न्यून है जो आद्योपान्त भक्ति को पढ़ते हों। परन्तु इस न्यून संख्या में ऐसे २ प्रेमी भी मौजूद हैं जो भक्ति का अक्षर २ पढ़ते हैं और भक्ति के बिना मिले व्याकुल रहते हैं। ऐसे प्रेमी सज्जनों से हमारा निवेदन है कि विशेषांक के लिए थोड़ा पुरुषार्थ करें अपने पास से कुछ खर्च करके भाई और बहिनों के हाथ में भक्ति पहुंचावें और जितने ग्राहक विशेषांक के बन सकें बनावें। विचारवान् और सच्चरित्र सज्जनों द्वारा लिखा हुआ १०० पृष्ठ का भक्ति का पुस्तक ॥) में कुछ महंगा सौदा नहीं है। यह ऐसा सामान है जो थोड़े से प्रयत्न से खरीददार की पसन्द हो जावेगा। स्थाई ग्राहकों को तो प्रसन्न होना चाहिये। उनको तो आगामी वर्ष २) रुपये में ३८४ पृष्ठ के स्थान में ४५२ पृष्ठ की बड़ी सुन्दर छपाई व उत्तम कागज की पुस्तक मिलेगी। इसलिए आगामी वर्ष में भक्ति का स्वागत करने के लिए अभी से तैयार हो जाइए। भक्ति से ही सुख और शान्ति होगी इसका विकाश कीजिए और दुःख के स्थान में आनन्द के भागी हूजिए।

नोटः निम्न लिखित महानुभावों को भक्ति के विशेषांक के लिए लेख भेजने की प्रेरणा की गई है आशा है पाठक गण भक्ति द्वारा इन सज्जनों के भावों से लाभ उठा सकेंगे।

पूज्य पं० मदन मोहनजी मालवीय, भाई परमानन्द जी, व्याख्यान वाचस्पती पं० दीन दयाल

जी शर्मा, श्री भोले बाबा भूतपूर्व सम्पादक वेदान्त केसरी, श्री हनुमानप्रसाद जी पोद्दार सम्पादक कल्याण भक्तवर श्री जयदयाल जी गोयन्दका स्वामी आनन्द भिक्षु सरस्वती, आचार्य गिड्वानी, सेठ जमनालाल जी बजाज, प्रो० वास्वानी, पं० माखनलाल जी चतुर्वेदी, गंगा तट निवासी स्वामी अच्युत मुनि जी महाराज आदि।

जिन प्रेमी पाठक पठिकाओं का वार्षिक चन्दा इस अंक के पहुंचने पर समाप्त हो जाता है उनको सूचित किया जाता है कि वह कृपया आश्विन की अमावस्या तक २) अग्रिम वर्ष का चन्दा मनिआर्डर द्वारा भेजदें अन्यथा पहिला अंक अर्थात् विशेषांक उनके नाम वी. पी. द्वारा भेजा जायगा। आशा है वह वी. पी. को लौटा कर कार्यालय को हानि नहीं पहुंचावेंगे।

(सम्पादक)

छान्दोग्य सार

ओमित्येतदक्षरमुद्गीथमुपासीत, ओमिति ह्युद्गायति तस्योपव्याख्यानम् ॥

ओं इस अविनाशी उद्गीथ की उपासना करे, ओं ही निश्चय करके उद्गाता है। उसका उपव्याख्यान है ॥ १ ॥

एषां भूतानां पृथिवीरसः पृथिव्या आपो रसोऽपामोषधयो रस ओषधीनां पुरुषो रसः पुरुषस्य वाग्रसो वाच ऋग्रस ऋचः साम रसः साम्न उद्गीथो रसः ॥२

इन भूतों का पृथिवी रस है अर्थात् सार है, पृथिवी का जल, जलों का ओषधियें, ओषधियों का पुरुष, पुरुष का ऋग्, ऋग् का साम, साम का उद्गीथ रस है ॥ २ ॥

स एष रसानां रसतमः परमः परार्द्ध्योऽष्टमो यदुद्गीथः ॥ ३ ॥

वह यह रसों का रसतम परम परार्द्ध आठवां उद्गीथ है ॥ ३ ॥

तेनेयं त्रयी विद्या वर्तते ओमित्याश्रावयत्योमिति शंसत्योमित्युद्गायत्येतस्यैवाक्षरस्यापचित्यै महिम्ना रसेन ॥ ६ ॥

उससे त्रिविद्या वर्तमान है। ओं को सुनता है, ओं की प्रशंसा करता है, ओं को ऊंचा गाता है, ओं अक्षर की महिमा रस रूप से कही है ॥ ९ ॥

तेनोभौ कुरुतो यश्चैतदेवं वेद यश्च न वेद नाना तु विद्या चाविद्या च यदेव विद्यया करोति श्रद्धयोपनिषदा तदेव वीर्यवत्तरं भवतीति खल्वेतस्यैवाक्षरस्योपव्याख्यानं भवति ॥१०॥

उससे दोनों कर्म करते हैं जो उसको मानता है और जो नहीं जानता। विद्या अविद्या नाना हैं। जो दो विद्या करके, श्रद्धा उपनिषद् करके करता है वही वीर्यवत्तर होता है। इस ओं का ही व्याख्यान होता है ॥ १० ॥

प्रजापति के पुत्र देवता और असुर हैं। उनमें से देवता लोग नासिका को प्रधान बनाकर उद्गीथ की उपासना करने लगे। असुरों ने समझा इससे यह हमको

जीत लेंगे। यज्ञसे जो फल प्राप्त हुवा वह नासिका ने सबको दिया। परन्तु अच्छा गन्ध अपने पास रक्खा। इस स्वार्थ को देख असुरों ने उसे पाप से बाँध दिया। जहां वह सुगन्ध को ग्रहण करती थी वहां दुर्गन्ध भी ग्रहण करने लगी यही पाप से बान्धना है। स्वार्थ वृत्ति से पाप वृत्ति उत्पन्न होती है। इसी तरह वाणी को ब्रह्मा बना कर उद्‌गीथ की उपासना करने लगे। उसनेभी अच्छे कहने को अपने पास रक्खा उसको भी असुरों ने पाप से बाँध दिया। उसी से दोनों कहती है सत्य और झूंठ। यही पाप से बाँधना है। इसी प्रकार चक्षु को अधिष्ठाता बनाकर यज्ञ करने लगे। असुरों ने उसको भी पाप से बान्ध दिया। वह भी दर्शनीय और अदर्शनीय को देखते हैं। अच्छे सुनने को भी कानने अपने पास रक्खा जिससे दोनों को सुनता है श्रवणीय और अश्रवणीय को। इसी प्रकार मनको ब्रह्मा बना कर अध्यात्म यज्ञारम्भकी। असुरोंने समझा इससे यह हमको जीतेंगे। उसने अपने संकल्प को अपने लिये रख लिया इससे असुरोंने इसको भी पापसे बाँध दिया। जिससे संकल्पनीय और असंकल्पनीय दोनों का संकल्प करने लगा. यही पाप से बाँधना है। तब वह देवता मुख्य प्राण को आश्रय कर ओंकार की उपासना करने लगे। इसमें कोई स्वार्थ नहीं आया। असुर तीव्र वेगसे पापसे बाँधने के लिये आये पर वह ऐसे नष्ट होगये जैसे पत्थर की भित्ति से लगकर मट्टी का ढेला नष्ट हो जाता है। उस उद्‌गीथ को अंगिरा ऋषि उपासता था। इसी को अंगिरा मानते हैं जो अंगों का रस है। वृहस्पति भी इसी ओंकार की उपासना करते थे। इसको ही वृहस्पति मानते हैं। वाणी ही वृहती है उसका यह पति है। उसको ही आयास्य मानते हैं उसको दालभ्य ने जाना यह प्रसिद्ध है। नैमषारण्य में वह उद्‌गाता हुवा था। इनके लिये कामनाओं को गाता है। जो विद्वान इस प्रकार ओंकार की उपासना करता है यह अध्यात्म उपदेश है।

अपूर्ण

भजन।

राग विहाग १

अबकी राख लेहु भगवान॥
हम अनाथ बैठीं द्रुम डरियां, पारधी साध्यो बान।
ताके डर निकसन चाहत हौं, ऊपर रह्यो श्चान॥
दोऊ भान्ति दुःख भयो कृपानिधि, कौन उबारे प्रान
सुमरत ही अहि डस्यो पारधी, लाग्यो तीर श्चान
सूरदास गुण कहं लग बरणों जै जै कृपा निधान॥

राग जंगला २

हरि बिन को राखे पति मेरी॥
अन्ध को अन्ध महा जो दुशासन,
आन सभा में घेरी॥
भीष्म द्रोण कर्ण से बैठे,
इन हूं नेक न हेरी।
अब मति भ्रष्ट भई सबहिन की,
पकर लियो ज्यों चेरी॥
एक विश्वास यही दृढ़ मेरे,
कृष्ण कृष्ण कह टेरी॥
सूरदास प्रभु बसन बढ़ाये,
हैगयो पर्वत ढेरी॥

राग सोरठा ३

तुम सुनियो हे बलि राजा वसुधा काहूकी न भई।
सतयुग में हिरणाकुश राजा चारों खूट मही।
अतीव प्रखण्ड महीपति राजा वाहू के संग न गई॥
त्रेता में रावण भयो राजा कञ्चन कोट मई।
इक लख पूत सवालख नाती लकड़ी काहू न दई॥
द्वापर में दुर्योधन राजा नौलख भीड़ सही।
सोरा योजन वाके छत्र झुलत रहे माटी मिलन लई
सतयुग त्रेता द्वापर कलियुग चारों युगन सही।
कहत सूर बई नर झूठे जिन यह अपनी कही॥

राग जंगला ४

नेह जुरयो नन्द नन्दन सों,
अब कैसे लाज रहै मोरी सजनी ॥टेक॥
यह अंखियां अब रह न सकत हैं,
देखे बिना व्रजराज री सजनी।
अटके नैन माधुरी मुसकन,
भूल गये सब काज री सजनी॥
देह गेह की सुधि बिसरानी,
रहो गिरो भांवे आज री सजनी।
लोक लाज कुल कान छुट गई,
लखा निरख ज्यों बाजरी सजनी॥
मायाराम अब ओट न कोऊ,
ज्यों घन सिन्धु जहाज री सजनी॥

राग जंगला ५

नाम को अधार मेरे नामको आधारा॥
मेरी मेरी करत जात दिन री रैन सारा।
नजर भर के देख प्रानी धुन्ध का पसारा॥
यमुना में गेंद गिरी ग्वाल बाल हारा।
कालीनाग नाथ लीनो कृष्ण भयो कारा॥
राजा बली के द्वारे ठाढे वामन रूप धारा।
बीस भुजा रावण की छिन में काट डारा॥
मथुरा में जन्म लीनो गोकुल सिधारा।
कंस को निरवंश कीनो मोर मुकुट वारा॥

राग कान्हरा ६

मैं तुम्हरी शरणा गत प्यारे।
परमानन्द मुकुन्द परातम,
दीनानाथ सकल भय टारे॥
दामोदर अच्युत अघ नाशक,
पाप हरण तव नाम मुरारे।
व्यापक एक अखण्ड अगोचर,
नाम न रूप प्रकाशन वारे॥
दास गुलाब बसो चित हमरे,
चार पदारथ याहि मंझारे॥

राग सारंग ७

हरि बिन कौन सहाई मन का॥
मात पिता भाई सुत बनिता,
हित लागो सब फन का।
आगे को कछु तुलहा बांधो,
क्या भरवासा धनका॥
कहा बिसासा इस भांडे का,
इतनक लागे ठनका॥
सकल धर्म पुण्य फल पावो,
धूर बांछहु सभ जनका।
कहै कबीर सुनो रे सन्त हु,
इह मन उडन पखेरु बन का॥

राग प्रभाति ८

मुख सों राधा कृष्ण बोल तेरा क्या लगेगा मोल ॥
तेरे हाथ पांव नहीं हिलते,
दश बीस कोस नहीं चलते ।
गिरहों की गांठ नहीं खुलती,
तू मन की घुण्डी खोल ॥ १ ॥
यह मन है घोड़ा थोड़ा,
घोड़े की पांच बछेरी ।
यह पाचों फिरें लुटेरी,
पांचों की बाग डरोर ॥ २ ॥
संसार कांच की बाजी,
तू किस पर होवे राजी ।
यह सकलो सुपन समाजी,
तू तिस पर मन ना डोल ॥ ३ ॥
तोहिं बहुत गुरु समझावे,
तू फिर कर जन्म न पावे ।
सांचा हरि चरणों लावे,
झूठे जग का नाता तोड़ ॥ ४ ॥

राग मलार ९

माई मोहि प्रीतम देहु मिलाई ॥
सकल सहेली सुख भर सूती,
जिहिं घर लाल बसाई ॥
मोहिं अवगुण प्रभु सदा दयाला,
मोहिं निर्गुण क्या चतुराई ।
करों बराबर जो पिया संग राती,
इह मेरी ढीठाई ॥
भई निमाणी शरण इक ताकी,
श्री सतगुरु पुरुष सुखदाई ।
एक निमिष में मेरा सब दुःख काटया,
नानक सुख रैन बिहाई ॥

राग मलार १०

मेरे प्रीतम प्राण पियारे ॥
प्रेम भक्ति अपनो नाम दीजे, दयाल अनुग्रह धारे ।
सुमरों चरण तिहारे प्रीतम, हृदय तिहारी आसा ।
सन्त जनां पै करो बेनती, मन दर्शन की प्यासा ॥
बिछुरत मरन जीवन हरि मिलते, उनको दर्शन दीजे
नाम अधार जीवन धन नानक, प्रभु मेरे किरपा कीजै

राग सारंग ११

मन कर कबहुं न हरि गुण गायो ।
विषयासक्त रह्यो निशि वासर, कीनो अपनो भायो
गुरु उपदेश सुन्यो नहीं कानन, पर दारा लिपटायो
पर निन्दा कारन बहु धावत, आगम नहीं समझायो
कहा कहाँ मैं अपनी करनी, जिहिं विध जन्म गंवायो
कहे नानक सब औगण मोमें, राख लेहु शरणायो

राग सारंग १२

ठाकुर तुम शरणाई आया ।
उतर गयो मेरे मन का संशा जबते दर्शन पाया ॥
अन बोलत मेरी बिर्था जानी अपना नाम जपाया ।
दुःख नाठे सुख सहज समाये, अनन्द२ गुण गाया
बांह पकर कढ लीने अपने गृह, अंध कूपते माया ।
कहे नानक गुरु बन्धन काटे, बिछुरत आन मिलाया

—∞—

भक्ति के द्वितीय वर्ष की विषय सूची।

	लेख	लेखक	पृष्ठ
१.	अखिल अमंगलों का आदि कारण	गङ्गाप्रसाद जी अग्निहोत्री	३७८
२.	आत्म त्याग	पं० ज्ञानचन्द्र जी शास्त्री	७
३.	आओ! आओ!! पुनः आओ!!!	श्री राजरानी देवी	१२७
४.	आयुर्वेद शिक्षा	पं० राम रक्षपालजी शास्त्री	२५७
५.	,, ,,	,, ,,	२७६
६.	,, ,,	,, ,,	३१४
७.	,, ,,	,, ,,	३७१
८.	ईश विनय (कविता)	मुरारी लाल "अभय"	१६०
९.	उपदेश सग्रह	भूमानन्द ब्रह्मचारी	१३०
१०.	उद्देश्य सौष्ठव	पं० किशोरीलाल जी वाजपेयी	१३१
११.	ऋषियों के आश्रम	पं० जयराम सनातन	३१६
१२.	,, ,,	,, ,,	३८२
१३.	ओंकार महिमा	एक महात्मा	५६
१४.	कर्म	महात्मा रूपराम जी	६५
१५.	,,	,, ,,	१५२
१६.	काश्मीर यात्रा	भूमानन्द ब्रह्मचारी	४८
१७.	कैवल्य उपनिषद्	,, ,,	२१७
१८.	गर्भोपनिषद्	भूमानन्द ब्रह्मचारी	३३७
१९	गो भक्तिः	पं० गंगाप्रसाद जी अग्नि होत्री	३५
२०.	गो भक्ति	भूमानन्द ब्रह्मचारी	१४९
२१.	गोत्व मीमांसा	पं० गंगाप्रसाद जी अग्नि होत्री	२६२
२२.	चञ्चल मन	श्री सूरज देवी	२६७
२३.	छान्दोग्य सार	एक महात्मा	३८९
२४.	जाबालोपनिषद्	भूमानन्द ब्रह्मचारी	२७४
२५.	जीव का स्वरूप	,, ,,	२६
२६.	तपस्विनी शाण्डिलिनी	,, ,,	२५८
२७.	तृष्णा	सूरज देवी	११०

२८.	दिव्य सन्देश	हनुमान प्रसादजी पोद्दार	७६
२९.	धर्मोपदेश	भूमानन्द ब्रह्मचारी	३११
३०.	धैर्य	सूरज देवी	६५
३१.	नारद भक्ति सूत्र	पं० किशोरीदास जी बाजपेयी	६७
३२.	नारायणोपनिषद्	भूमानन्द ब्रह्मचारी	३०६
३३.	पश्चाताप	स्वा० आनन्द भिक्षु	३८०
३४.	प्रार्थना (कविता)	प० रामनारायण जी	३००
३५.	प्रार्थना	सम्पादक	३०१
३६.	पुण्य श्लोक गोभक्तों से निवेदन	पं० गंगाप्रसाद जी अग्निहोत्री	३४९
३७.	पूर्व काल में कहानियों द्वारा विज्ञान की शिक्षा	एक महात्मा	६०
३८.	प्रेम	ब्रज कुमारी	१७२
४९.	प्रेमी ग्राहकों से निवेदन	सम्पादक	३५८
४०.	प्रेम से भगवत्प्राप्ति	श्री भोले बाबा जी	३६५
४१.	बुद्धि और लक्ष्मी का सम्वाद	एक महात्मा	२८
४२.	ब्रह्मचर्य	सूरज देवी जी	८१
४३.	ब्रह्मबिन्दु उपनिषद्	भूमानन्द	१८२
४४.	भजन	संग्रहीत	३९
४५.	,,	,,	७२
४६.	,,	,,	१०४
४७.	,,	,,	१३३
४८.	,,	,,	१६५
४९.	,,	,,	१९८
५०.	,,	,,	२३०
५१.	,,	,,	२६०
५२.	,,	,,	२९३
५३.	,,	,,	३२५
५४.	,,	,,	३५९
५५.	,,	,,	३९०
५६.	भक्तों के चरित्र (रामानन्द जी)	सम्पादक	४

५७.	भक्तों के चरित्र (रैदास जी)	सम्पादक	४४
५८.	,, ,, (रामानुजाचार्य)	भूमानन्द ब्रह्मचारी	१४१
५६.	,, ,, (शबरी)	,, ,,	१८३
६०.	,, ,, (सूरदास)	सम्पादक	२०६
६१.	,, ,, (धन्ना जी)	,,	२३७
६२.	,, ,, (रूप सनातन)	,,	२८५
६३.	,, ,, (सदन कसाई)	,,	३४६
६४.	भक्ति का महात्म्य	श्री भोले बाबाजी	३६४
६५.	भगवन्नाम सार है	,, ,,	३५२
६६.	भक्ति पथ	पं० किशोरी दासजी बाजपेयी	१४०
६७.	भक्ति	ब्रज कुमारी	२८३
६८.	भक्ति समर्पण (कविता)	सुमित्रा देवी	८०
६६.	भूसुरों का कर्म क्षेत्र में स्वागत (कविता)	म० शोभाराम	३८
७०.	मंगलाचरण	एक महात्मा	१
७१.	,,	,,	४१
७२.	,,	,,	७३
७३.	,,	,,	१०५
७४.	,,	,,	१३७
७५.	,,	,,	१६६
७६.	,,	,,	२०१
७७.	,,	,,	२३३
७८.	,,	,,	२६५
७६.	,,	,,	२६७
८०.	,,	,,	३२६
८१.	,,	,,	३५१
८२.	महात्माओं के वाक्य	संग्रहीत	३७
८३.	,, ,,	,,	१५३
८४.	,, ,,	,,	२४६
८५.	,, ,,	,,	२७६

८६.	महात्माओं के वाक्य	संग्रहीत	३३२
८७.	,, ,	,,	६४
८८.	मनोवृत्तियों की मारकता	पं० ज्ञानचन्द्र शास्त्री	८८
८९.	मनोवृत्तियों का निग्रह	,, ,,	१२७
९०.	मनुष्य को क्या करना चाहिये	भूमानन्द ब्रह्मचारी	८६
९१.	मालिन लीला	उद्धृत	२३६
९२.	मानवधर्म सार	एक महात्मा	११५
९३.	,,	,,	१५५
९४.	,,	,,	१८८
९५.	,,	,,	२२६
९६.	,,	,,	२५३
९७.	,,	,,	२६०
६ ,	,,	,	३१६
९९.	,,	,,	३४५
१००.	मित्र, मित्र के लाभ और लक्षण	,,	५४
१०१.	मूल रामायण	,,	१०
१०२.	मैत्रायणी उपनिषद्	भूमानन्द ब्रह्मचारी	६१
१०३	,, ,,	,, ,,	१२३
१०४.	यक्ष युधिष्ठिर सम्वाद	,, ,,	३२१
१०५.	विनय (कविता)	मुरारीलाल अभय	३५१
१०६.	विशेषांक	सम्पादक	३८७
१०७.	श्रीकृष्ण चरित्र	भूमानन्द ब्रह्मचारी	२१६
१०८	,, ,,	,,	२४१
१०९.	,, ,,	,,	२६६
११०.	,, ,,	,,	२६७
१११.	,, ,,	,,	३३३
११२.	,, ,,	,,	३७४
११३.	श्रद्धा	सूरज देवी	३३६
११४.	,,	,,	३८४

११५. सत्योपदेश	एक महात्मा	१६१
११६. सत्य	सूरज देवी	१६५
११७. ”	”	२०३
११८. ”	”	३०३
११६. सद्गुरु शरण	बदामो देवी	२०६
१२०. सर्व सारोपनिषद्	भूमानन्द	१४७
१२१. सत्संग	”	१७५
१२२. सत्यवान भावालाख्यान	सूरज देवी	२४६
१२३. सेवा धर्म	पं० किशोरीदास जी बाजपेयी	३१
१२४. संसार समाचार	संग्रहित	१३३
१२५. ”	”	१६८
१२६. ”	”	२००
१२७. ”	”	३००
१२८ हमारी आयु	सम्पादक	६८
१२६ हमारे कुल में तरुण पुरुष नहीं मरते	बालजी गोविन्द जी	१०८
१३०. हंसोपनिषद्	भूमानन्द ब्रह्मचारी	२४५
१३१. हमारा वृक्षों से महान् उपकार	पं० रघुनाथ जी	३२२

“कल्याण” का भक्तांक।

'गीता प्रेस' गोरखपुर से मुद्रित और भाई हनुमान प्रसादजी पोद्दार द्वारा संपादित कल्याण का विशेषांक 'भक्तांक' सम्पादक “भक्ति” की ओर से समालोचनार्थ प्राप्त हुआ। यह एक २५० पृष्ठ का अत्यंत सुंदर अंक है जिसमें ५५ सुन्दर सुन्दर इकरंगे तथा तिरंगे चित्र हैं प्रत्येक लेख बहुत ही महत्व पूर्ण तथा सद्बोध से भरा हुआ है। भाई हनुमानप्रसादजी इस दशामें जो प्रयत्न कर रहे हैं वह सराहनीय है।

इस भक्तांक में हम क्या देखते हैं ? पृष्ठ पर पृष्ठ बदलते जाइये एक से एक अपूर्व आनंददायिनी मननीय सामग्री आपकी दृष्टि पड़ती जायगी। एक २ लेख को पढ़ते जाइये अपूर्व आनन्द मिलता जायगा। संसारमें भक्ति का कितना प्रभाव है 'भक्ति द्वारा प्रभावित होकर भक्तजनों ने किस २ रीति से अपना कल्याण साधा है, भक्ति की साधना कैसे हो सकती है उसके स्वरूप और लाभ क्या २ हैं, यह सब बड़े सुन्दर ढंग से समझाया है। सिर्फ हमारे हिन्दू धर्ममें ही नहीं परंच अन्यान्य धर्मों में भी भक्ति का कितना प्रभाव है यह बात बहुत सरलता से हमारे सामने ला रक्खी है। इस कलिकाल में केवल भक्ति ही एक मात्र मोक्ष का साधन है इत्यादि सब बातें अनेकानेक कथाओं तथा दृष्टान्तों द्वारा समझाने का पूरा प्रयत्न किया गया है।

आशा है 'कल्याण' के प्रेमी-हम सब तथा सारा संसार कल्याणको अपनाकर अपने कल्याणका मार्ग ग्रहण करेगा और 'कल्याण' उत्तरोत्तर उन्नति करता हुआ हमको हमारे कल्याणमें सहायक होगा।

श्रीछेदीलाल जी गुप्ता बी. ए.

अपूर्व अवसर

एक वर्ष तक आठ आनेमें भक्ति

किन को ?

तीन सौ निर्धन विद्यार्थियों, विद्यार्थिनियों

तथा अछूत विद्यार्थियों को।

विदित हो कि 'भक्ति' के कतिपय प्रेमी सज्जनों ने उन विद्यार्थियों तथा विद्यार्थिनियों के सुभीतेके लिये जोकि २) वार्षिक चंदा देनेमें असमर्थ होने के कारण 'भक्ति' रूपी अमूल्य रत्न से वञ्चित रहते हैं, प्रबन्ध किया है कि उनको आठ आने में ही एक वर्ष तक भक्ति दी जाय। अर्थात् आश्विन में निकलने वाले अनेक चित्रों से सुसज्जित सौ पृष्ठ वाले भगवद्भक्तांक को जिसका मूल्य केवल ॥) आना है खरीदने से उनको 'भक्ति' के आगामी प्रकाशित होने वाले ११ अंक मुफ्त में दिये जायंगे। निर्धन विद्यार्थियों को यह अपूर्व अवसर हाथ से नहीं खोना चाहिये। पत्र मदरसे के अध्यापक तथा अन्य किसी प्रतिष्ठित सज्जन की मार्फत "मैनेजर भक्ति कार्यालय भगवद्भक्ति आश्रम रेवाड़ी" के पते से आना चाहिये।

मैनेजर

भक्ति के संरक्षक

१. राय बहादुर ला० सेवकराम जी एम. एल. सी. बार-ऐट-लॉ लाहौर १२५)
२. भक्त नन्दकिशोर जी चर्खी दादरी १११)
३. राय साहब श्री वल्लभ प्रसाद जी रईस आनरेरी मजिस्ट्रेट पटना १०१)
४. राय बहादुर ला० बनारसीदास जी रईस, मिल ओनर अम्बाला १०१)
५. श्रीमान् भाई नारायण सिंह जी हीरामण्डी लाहौर १०१)
६. राय बहादुर, कप्तान राव बलबीर सिंह जी ओ. बी. ई. रामपुरा ५१)
७. श्रीमान् धाय भाई गनेशीलाल जी आरमी मिनिस्टर अलवर राज्य ५१)
८. सेठ अर्जुनदास जी भटिण्डा। ५१)
९. राव श्रीराम रईस नांगल २५)
१०. म० शोभाराम जी डूंगरवास २५)
११. चौ० धर्मसिंह जी मलिक, तहसीलदार रेवाड़ी २५)
१२. राव निहालसिंह जी सूबेदार पाल्हावास २५)
१३. बा० स्वयम्बरदास जी बी० ए० इन्स्पेक्टर आफ स्कूल्स पटना। २५)
१४ श्रीमती रानी निहालकौर धर्मपत्नी कप्तान राव बहादुर बलबीरसिंह जी २५)
१५. सेठ बनवारी लाल जी लोहिया, चावड़ी बाज़ार दिल्ली। २५)
१६. चौ० नेतराम साहब गिरदावर हलका माटूसाना जिला गुड़गांवा। २५)
१७. बख्शी चाननशाह एम. ए., एल. एल. बी. इन्कमटैक्स आफीसर जालंधर। २५)
१८. पं० मुकुन्द जी शर्मा (डहीना निवासी) अकाउण्टैन्ट हैड आफिस जयपुर २५)
१९. ला० नन्दकरणदास जी अग्रवाल भिवानी। २५)
२०. राजा रूपसिंह जी रईस जिहाजगढ़। २५)
२१. पं० गोपीनाथ जी [चिड़ावा निवासी, मालिक फार्म
काशीनाथ बच्चूमल गली परांठा दिल्ली २५)
२२. श्रीमती खुशालदेवी धर्मपत्नी चौ० नवलसिंह जी कोसली। २५)

सहायक।

चौ० हुकमसिंह जी निखरी ११)

[illegible] राव शादीराम जी दस्तापुर, रेवाड़ी । ५)

२. [illegible]जलाल जी शिरस्तेदार प्राईवेट सैक्रेटरी आफिस संगरूर, जींद । ५)

३. राव बलवन्तसिंह जी मु० जैतपुर तहसील रेवाड़ी । ५)

४. श्रीमती सूरज देवी धर्म पत्नी चौ० जोरावरसिंह जी शिरान मन अलीगढ़ । ५)

५. चौ० शिवनारायणसिंह जी कोतवाल, सीकर राजपूताना ५)

६. श्रीमान् पं० जयराम जी शर्मा 'सनातन' इलाहाबाद बैंक देहली । ५)

७. ला० बनारसी दास जी, अकाउण्टेण्ट हैजूरी, संगरूर । ५)

८. ला० भगवान दास जी, अ० हैड क्लर्क सैक्रेटरी इजलास खास आफिस संगरूर ५)

९. महन्त प्रकाशानन्द जी मन्दिर चरणदास मकान बल्लीमारान दिल्ली ५)

१०. मि० एल. के. मिश्रा इंस्पेक्टर, पोस्ट आफिस जयपुर ५)

पढ़ने योग्य पुस्तकें ।

१. भगवद्गीता संस्कृत तथा भाषा टीका सहित मूल्य ॥=)

२. सारसंग्रह मूल्य =)

३. शब्द संग्रह मूल्य -)॥

४. भगवत् गीता दशम अध्याय पर्यन्त मूल्य ।-)

५. अष्टोत्तरशतमन्त्रमाला मूल्य -)।

६. वेदोपनिषत् मूल्य ।-)

७. ज्ञानधर्मोपदेश मूल्य -)।।

८. भाषा पञ्जिका प्रकाश मूल्य ॥)

९. भक्ति योग संग्रह ,, -)॥

१०. शब्द संग्रह गुटका ,, ।)

११. शब्द सदाचार संग्रह ,, -)।

मिलने का पता:-

श्री भगवद्भक्ति आश्रम रेवाड़ी ।

मुद्रक तथा प्रकाशक भूमानन्द ब्रह्मचारी "भक्ति प्रेस" आश्रम रामपुरा रेवाड़ी ।